Satya ka Avahan

सत्य का आवाहन

Invoking the Divine

Year 11 Issue 5 September–October 2022
Membership Postage: Rs. 100

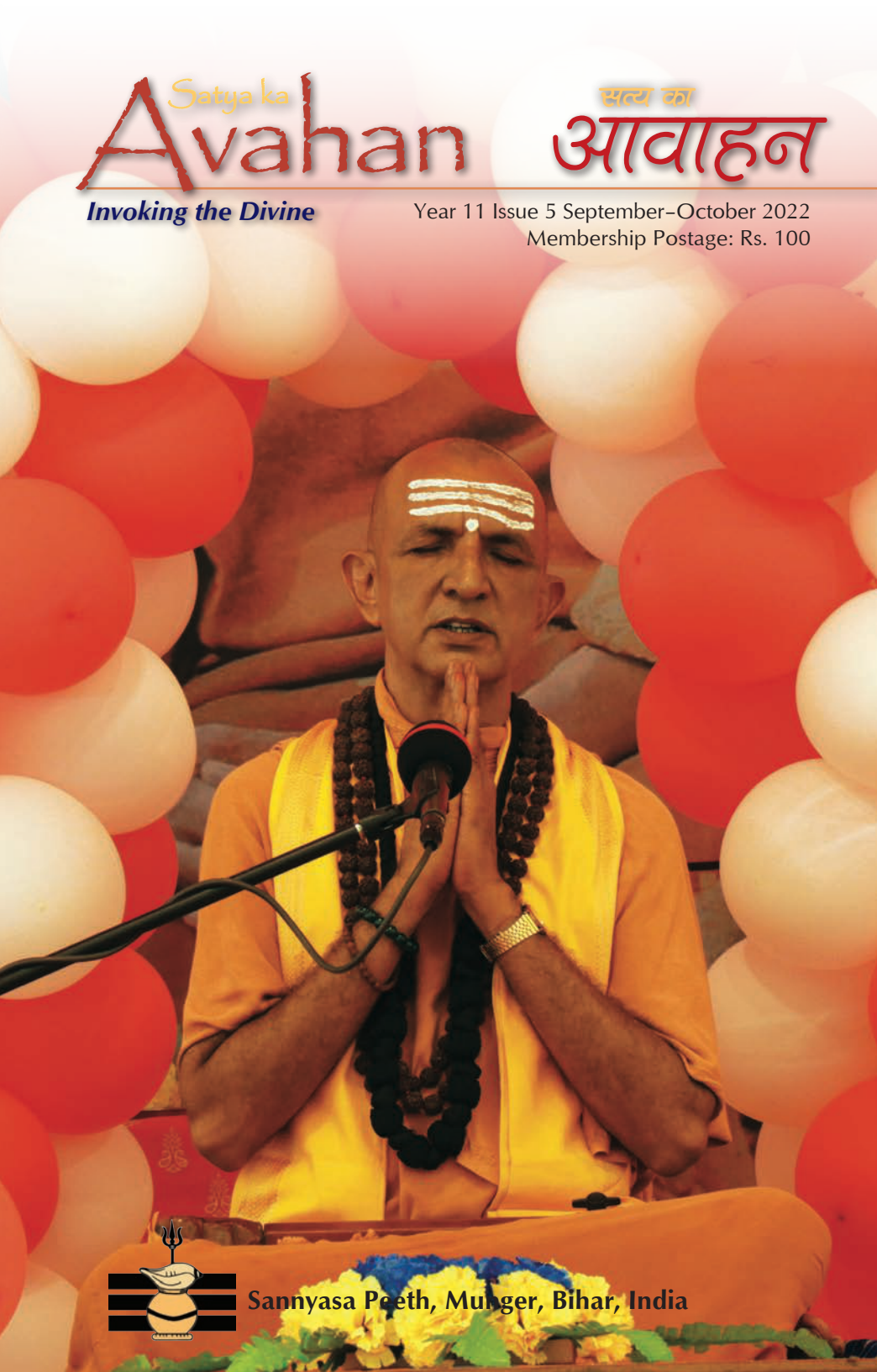

Sannyasa Peeth, Munger, Bihar, India

Hari Om

Satya ka Avahan is a bilingual and bi-monthly magazine compiled, composed and published by the sannyasin disciples of Sri Swami Satyananda Saraswati for the benefit of all people who seek health, happiness and enlightenment. It contains the teachings of Sri Swami Sivananda, Sri Swami Satyananda, Swami Niranjanananda and Swami Satyasangananda, along with the programs of Sannyasa Peeth.

Editor: Swami Gyansiddhi Saraswati

Assistant Editor: Swami Shivadhyanam Saraswati

Published by Sannyasa Peeth, c/o Ganga Darshan, Fort, Munger – 811201, Bihar.

Printed at Thomson Press India (Ltd), Haryana

© Sannyasa Peeth 2022

Membership is held on a yearly basis. Late subscriptions include issues from January to December. Please send your requests for application and all correspondence to:

Sannyasa Peeth
Paduka Darshan
PO Ganga Darshan
Fort, Munger, 811201
Bihar, India

✉ A self-addressed, stamped envelope must be sent along with enquiries to ensure a response to your request.

Front cover and plates:

Sri Lakshmi-Narayana Mahayajna 2022, Munger

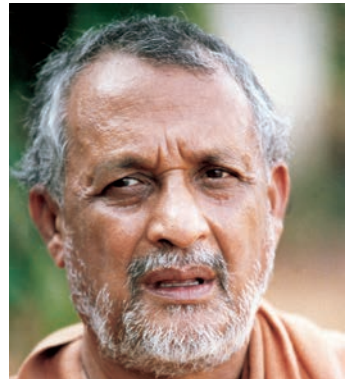

SATYAM SPEAKS – सत्यम् वाणी

Remember that there has never been a sannyasin, nor will there ever be one, who has not had samskaras, karma and dharma to work through. Please know that when you are working through these times, they may not be pleasant, they may be very hard times, but they can be overcome. You can overcome any and all of them. It depends on you. You must be strong. Do not let them take hold of you. You should know that you can go above them.

—Swami Satyananda Saraswati

याद रखो कि न तो कोई ऐसा संन्यासी आज तक हुआ है और न ही होगा जिसे अपने संस्कारों, कर्मों और धर्मों का सामना न करना पड़ा हो। ऐसे अनुभव बहुत कठिन और चुनौतीपूर्ण हो सकते हैं, पर उन सभी पर विजय प्राप्त की जा सकती है। यह तुम पर निर्भर करता है। तुम्हें मजबूत बनना है, उन्हें खुद पर हावी नहीं होने देना है। यह विश्वास रखो कि तुम उनसे ऊपर उठ सकते हो।

—स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

Published and printed by Swami Kaivalyananda Saraswati on behalf of Sannyasa Peeth, Paduka Darshan, PO Ganga Darshan, Fort, Munger – 811201, Bihar.
Printed at Thomson Press India (Ltd), 18/35 Milestone, Delhi Mathura Rd., Faridabad, Haryana.
Owned by Sannyasa Peeth **Editor**: Swami Gyansiddhi Saraswati

Satya ka Avahan
सत्य का आवाहन
Invoking the Divine
Year 11 Issue 5 • September–October 2022

न तु अहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम्। कामये दुःखतप्तानां प्राणिनां आर्त्तिनाशनम्॥

"I do not desire a kingdom or heaven or even liberation. My only desire is to alleviate the misery and affliction of others."

—Rantideva

Contents

2 8 September 2022: The Form of Narayana
3 8 सितम्बर 2022 – संन्यास पीठ
11 9 September 2022: The Mandate
15 9 September 2022: More Than Just Two Dreams
22 10 सितम्बर 2022 – गुरु शिष्य संबंध
26 10 September 2022: Sannyasa
29 11 September 2022: Sannyasa Peeth
32 11 सितम्बर 2022 – आत्मभाव
34 11 September 2022: The Conch
37 11 सितम्बर 2022 – दिव्य शंखनाद
39 12 September 2022: Poornahuti
42 12 सितम्बर 2022 – पूर्णाहुति
44 Sankranti at Sannyasa Peeth

8 September 2022: The Form of Narayana

We had a beautiful start to the Lakshmi-Narayana Mahayajna. Lord Narayana gave an indication of his presence. First, he saw that we were invoking him not with one name, *Narayana*, *Narayana*, *Narayana* or *Vishnu*, *Vishnu*, *Vishnu*. He saw that we were invoking him with a thousand names. So he said, 'Which form is left now? They are calling all my forms.' Yes, we were inviting all his thousand forms.

This thousand has a specific meaning. The *Purusha Suktam* begins with *sahasrashirsha purushaha* – God has thousand heads, *sahasraksha,* thousand eyes, *sahasrapat*, thousand hands and thousand feet. He is in many forms, not just in one form, and therefore he is the all-pervasive energy. When Lord Narayana heard that we were not calling him only by one name, but we were invoking his thousand forms with thousand names, he said, 'I have to be present there somehow,' and he came with a thousand raindrops. When the rain was falling, the whole area looked like a small lake.

Narayana lives in water. His abode is *ksheersagar*, the ocean of water and milk, where he reposes on the serpent Sheshnag. Sheshnag is represented in our body as kundalini, who resides in mooladhara. Narayana is the master of kundalini on top of kundalini in swadhisthana. Then Lakshmiji said, 'If you are going to make everything wet, then what will I do?' He said, 'Well, I go first. You come last in the form of peace, harmony, positivity and contentment.'

During this yajna, we can expect the presence of Narayana. Lakshmi will appear on the last day, not before. The invocation has to be complete and after the invocation, Lakshmi comes and brings us peace, prosperity, happiness, contentment and the joy of fulfilment. ■

8 सितम्बर 2022 – संन्यास पीठ

इस पावन श्रीलक्ष्मीनारायण महायज्ञ में आप सबका स्वागत है, अभिनंदन है। ग्यारह वर्षों से योगनगरी मुंगेर में संन्यास पीठ के परिसर में श्रीलक्ष्मीनारायण महायज्ञ हर्षोल्लास के साथ संपन्न होते आया है। यह तीसरा वर्ष है कि कोरोना महामारी के कारण हमारी योगनगरी के नागरिक बड़ी संख्या में इस यज्ञ में उपस्थित नहीं हो पा रहे हैं, लेकिन इस वर्ष यह प्रयास किया जा रहा है कि योगनगरी के नागरिक कुछ संख्या में प्रतिदिन यहाँ पर आयें और इस यज्ञ के आशीर्वाद एवं संदेश को अपने हृदय में धारण करके समाज में फैलायें। देश और विदेश के भक्त भी नहीं आ पा रहे हैं, लेकिन वे ऑनलाइन प्रस्तुति के माध्यम से इस यज्ञ के साक्षी हैं।

सन् 2009 में हमारे गुरुजी ने संन्यास पीठ की स्थापना का आदेश दिया और इसके पीछे भी एक कहानी है। सन् 2008 में हम जब विदेश की यात्रा से वापस लौटे और गुरुदेव के पास प्रणाम करने के लिये पहुँचे तो उन्होंने कहा, 'निरंजन, तुमने अब यात्रा बहुत कर ली है। अब तक तुम्हारे पैरों में चक्के लगे थे, और योग प्रचार-प्रसार के कार्य में तुमने सहयोग दिया है। अब समय आ रहा है कि तुम एक स्थान में स्थिर हो जाओ और संन्यास को जानने का,

समझने का, आत्मसात् करने का प्रयत्न करो। योग के लिये तुमने अब तक काम किया, अब संन्यास को आत्मसात् करो।'

यही संदेश हमारे परमगुरु, स्वामी शिवानन्द जी ने भी हमारे गुरुदेव को दिया था। उन्होंने कहा था कि विश्व में योग का प्रचार करो, घर-घर तक योग को पहुँचाओ और बीस वर्षों तक काम करने के पश्चात् तुम योग का कार्य समाप्त करके सम्पूर्ण विश्व के लिये, ब्रह्माण्ड के लिये कार्य करना। यही हमारे गुरुदेव, श्री स्वामी सत्यानन्द जी ने एक संकल्प के रूप में किया। सन् 1963 से, जब से योग विद्यालय की स्थापना मुंगेर में होती है, सन् 1983 तक रात और दिन एक करके, देश और विदेश में भ्रमण करके उन्होंने योगविद्या के सनातन संदेश को घर-घर पहुँचाया। उसके पश्चात् वे आश्रम छोड़कर चले जाते हैं और तपस्या में रत होते हैं, क्योंकि ऐसा ही उनके गुरुदेव का आदेश था। फिर वे ब्रह्माण्ड के लिये काम करते हैं।

जाने के पूर्व, सन् 2009 में उन्होंने हमें भी आदेश दिया। सन् 2008 में हम बिहार योग विद्यालय के दायित्त्वों से मुक्त हो गये और अगली पीढ़ी को बिहार योग विद्यालय के संचालन का दायित्व सौंपा। उसी समय गुरुदेव ने कहा कि तुम्हारे द्वारा योग का जो कार्य होना था, वह हो गया है। तुमने बहुत बार विश्व का चक्कर काटा है, तुम घर-घर गये हो, विश्वप्रसिद्ध हो गये हो, लेकिन संन्यास में सिद्ध होना बाकी है और अब तुमको आगे वही करना है। उसके पश्चात् सन् 2009 की गुरु पूर्णिमा के पूर्व उन्होंने हमें बुलाकर संन्यास पीठ की स्थापना का आदेश दिया। हमने उनसे पूछा कि मुंगेर में तो एक आश्रम है ही और आप आदेश दे रहे हैं संन्यास पीठ की स्थापना के लिये, वहाँ पर दो आश्रम हो जायेंगे। उन्होंने कहा, 'हाँ, एक योग को समर्पित है और दूसरा संन्यास को।' हमने पूछा कि आप जिस पीठ की स्थापना करने का आदेश हमें दे रहे हैं, उसका प्रयोजन और उद्देश्य क्या रहेगा। उन्होंने कहा, 'साधु के लिये, समाज के लिये और संस्कृति के लिये।'

साधु, समाज और संस्कृति

संन्यास पीठ के ये तीन लक्ष्य हैं। पहला है साधु का उत्थान। साधु का उत्थान कैसे होता है? दीक्षा लेने से या वस्त्र बदलने से किसी का उत्थान नहीं होता। जब तक आंतरिक परिवर्तन न हो, जब तक मोह-माया के बंधन से हम स्वयं को मुक्त न कर सकें तब तक यह सम्भव नहीं। लेकिन हर व्यक्ति सोचता है

मोह-माया से मुक्त होने का मतलब घर-परिवार-संसार को छोड़ देना। जिनको मालूम नहीं, वे ऐसा सोच सकते हैं। हमने भी अपना घर-परिवार छोड़ा है, लेकिन एक बड़े घर में आये हैं और एक बड़े परिवार के साथ हैं। जब साधु घर छोड़ता है, वह माता-पिता, भाई-बहनों का घर होता है, संबंध होता है, लेकिन फिर वह स्वयं को ईश्वर के घर से जोड़ता है, जो सम्पूर्ण पृथ्वी और सृष्टि है। *ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्* – सारा जगत् ईश का आवास ही है, और यह सारा जगत् ही एक साधु का घर बनता है। पहले चार से संबंध था, उसके बाद साधु चार करोड़ से संबंध बनाता है। इसलिए साधु का गृह-त्याग नहीं होता, बल्कि उसे तो बड़ा घर मिलता है। उसके परिवार का त्याग नहीं होता, उसको तो बड़ा परिवार मिलता है।

साधु के उत्थान के लिये यह आवश्यक है कि वह एक बार अपने भीतर झाँके, अपने भीतर एक सकारात्मक परिवर्तन को लाकर, जो सत्य पर आधारित है, जो शिव पर आधारित है, अपने जीवन को सुंदर बनाए। यही एक साधु की तपस्या, साधना, लक्ष्य एवं उद्देश्य है। स्वार्थ का त्याग करके निष्काम भाव से वह ईश्वर की सेवा में स्वयं को समर्पित करता है। जब तक स्वार्थ रहता है, हम घर-परिवार और स्वयं की सेवा करते हैं और जब निःस्वार्थ भाव होता है तब हम समाज और ईश्वर की सेवा करते हैं।

श्री स्वामीजी ने समाज के उत्थान के लिये भी कहा, क्योंकि समाज में अशांति, तनाव, परेशानी और चिंता है, तथा इन सब के बोझ से दम भी घुटता है। तनाव, परेशानी, चिंता आदि का बोझ तो हम सब अपने सिर पर लेकर

घूमते ही रहते हैं। कभी व्यवसाय की चिंता, कभी नौकरी की चिंता, कभी स्वजनों की चिंता, कभी आर्थिक चिंता, कभी मरने की चिंता, कभी जीने की चिंता, कभी संतान न होने की चिंता, कभी शादी नहीं होने की चिंता, शादी हो तो उसके बाद भी चिंता – मतलब चिंता और परेशानी से व्यक्ति कब मुक्त होता है? नौकरी न रहे तो भी रोते हैं कि नौकरी नहीं है, नौकरी मिलने पर भी रोते हैं कि अब समय नहीं मिलता है। तनाव और परेशानी से तो व्यक्ति कभी मुक्त नहीं होता है और इसके कारण जीवन, भावनाएँ और विचार कुंठित हो जाते हैं। इनके कुंठित होने से फिर मनुष्य अपने जीवन के लक्ष्य से भ्रमित हो जाता है और दुःख को अपना सगा साथी मानता है।

जब मनीषियों ने इस विषय पर चिंतन किया तो उन्होंने कहा कि जो व्यक्ति समाज में रहता है, उसके भीतर एक आध्यात्मिक वृत्ति का भी होना आवश्यक है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि तो हमेशा हमारे साथ हैं, लेकिन ये सब नकारात्मक वृत्तियाँ हैं। सकारात्मक वृत्ति कौन सी है, क्या है? सकारात्मक वृत्ति कहलाती है ब्राह्मी वृत्ति, और ब्राह्मी वृत्ति का मतलब होता है – स्वयं को परमसत्ता के साथ जोड़ना, स्वयं को सकारात्मक बनाना और स्वयं को सत्य के साथ जोड़ना। जब हमारे भीतर ब्राह्मी वृत्ति का उदय होता है तब जाकर जीवन में सद्विचार, सद्व्यवहार और सत्कार्य होते हैं। उसके पूर्व आप प्रयास कर लो, लेकिन भाव नहीं आता है। कर्म होता है, लेकिन भाव नहीं आता है और जब भाव आता है और कर्म के साथ जुड़ता है, तब मनुष्य का उत्थान होता है, समाज का विकास होता है। सब समाज के विकास की बात कहते हैं, तो क्या मकान, अस्पताल और स्कूल बनाने से समाज का विकास होता है? या अपनी भावनाओं को समाज से जोड़कर समाज के उत्थान के लिये एक प्रयत्न करने से समाज का विकास होता है?

जब तक आप अपनी भावनाओं को शुद्ध, सकारात्मक एवं रचनात्मक नहीं बनाओगे और उनको समाज-संसार के साथ नहीं जोड़ोगे तब तक समाज का विकास नहीं होगा। यह नई बात नहीं है, सब देखते हैं प्रतिदिन, प्रतिपल। जिस व्यक्ति की नकारात्मक सोच है, उसके द्वारा हमेशा नकारात्मक, विध्वंसक एवं हिंसात्मक कार्य होते हैं, और जिस व्यक्ति की सकारात्मक सोच है, उसके द्वारा जो भी कार्य होता है, वह समाज में शांति, सुख और सद्भावना को लाता है। इसलिये जब हमारे गुरुजी ने आदेश दिया कि संन्यास पीठ का एक लक्ष्य है समाज का उत्थान, तो ऐसा ही विचार मन में आया।

उसके पश्चात् उनकी तीसरी बात थी, संस्कृति का विकास। संस्कृति क्या है? क्या नाच-गाना को ही आप सांस्कृतिक कार्यक्रम मानते हो? नहीं, संस्कृति का मतलब होता है – *सम्यक् कृतिः इति संस्कृतिः*। जब हर व्यक्ति के जीवन की कृतियाँ सम्यक् रूप से होती हैं तो वे संस्कृति का निर्माण करती हैं। *साहित्य-संगीत-कलाविहीनः साक्षात् पशुः पुच्छविषाणहीनः* – हमारे यहाँ कहा जाता है कि संगीत, कला और साहित्य, ये तीन चीजें हैं जो एक मनुष्य के पास होनी चाहिये और अगर ये नहीं हैं तो मनुष्य की वही स्थिति है जैसे बिना पूँछ और सींग के जानवर की होती है। क्या ऐसा जानवर सुंदर दिखता है?

यहाँ पर संगीत, शास्त्र और कला के बारे में जो कहा जा रहा है उसका तात्पर्य क्या है? संगीत का अर्थ होता है – भावों को बढ़ाना, शास्त्र का अर्थ होता है – बुद्धि को बढ़ाना, कला का अर्थ होता है – कार्यशैली को उत्तम बनाना। जब मनुष्य की बुद्धि, भावना और कर्म व्यवस्थित होते हैं तब जाकर जीवन में संस्कृति का निर्माण होता है, अर्थात् अच्छाई, सकारात्मकता और सद्गुणों का विकास होता है। उसके बाद उनकी अभिव्यक्ति होती है हमारे घर, परिवार और समाज में और वहाँ उस अभिव्यक्ति का सकारात्मक असर पड़ता है, इन गुणों को अपनाने के लिये दूसरे लोग प्रेरित होते हैं, तब जाकर संस्कृति का विकास और विस्तार होता है।

संन्यास – अध्यात्म का सम्बल

इन तीन प्रयोजनों की पूर्ति के लिये गुरुदेव ने संन्यास पीठ की स्थापना का आदेश दिया और हमलोगों ने इस दिशा में प्रयास भी किया है। प्राय: जब कोई व्यक्ति संन्यास पीठ का नाम सुनता है तो सोचता है कि संन्यास पीठ में तो सबको संन्यास ही दिया जायेगा। जैसे कोई व्यक्ति योगाश्रम का नाम सुनता है तो मन में एक भाव आता है कि वहाँ पर हम योग सीखेंगे, वैसे ही संन्यास आश्रम का नाम सुनकर विचार आयेगा कि वहाँ पर सबको संन्यास दिया जाता है। लेकिन ऐसी बात नहीं है। संन्यास हमारे देश की एक बहुत ही प्राचीन परिपाटी है, परंपरा है, सकारात्मक जीवनशैली है। हमारा देश सत्युग से कलियुग तक के चारों युगों में भौतिकवाद और अध्यात्मवाद, दोनों में सामंजस्य और संतुलन को लाकर आगे बढ़ा है। जो राष्ट्र भौतिकवाद के चपेट में आये, वे समाप्त हुये हैं। भारतीय सभ्यता आज इसलिये जीवित है क्योंकि इसका आधार भौतिकवाद नहीं, बल्कि अध्यात्मवाद रहा है। हम

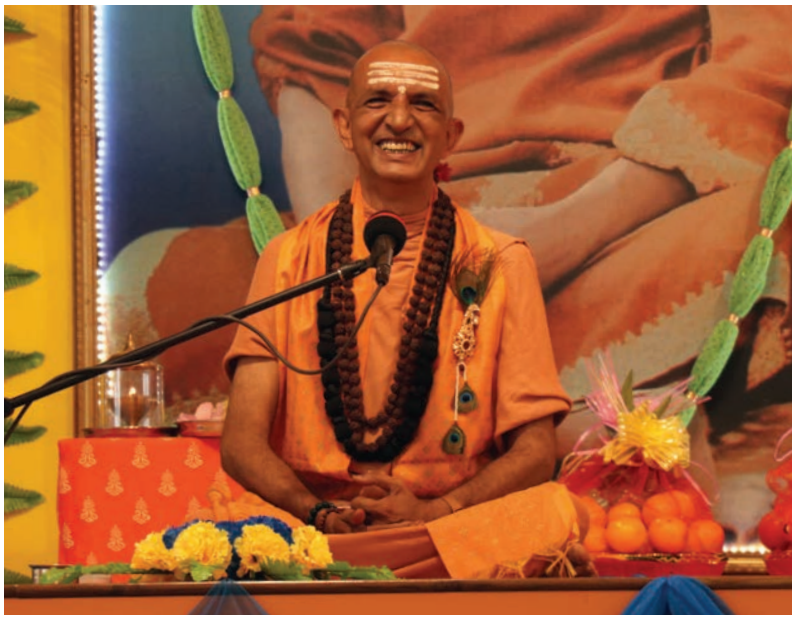

हर हाल में खुश हैं, हर परिस्थिति में खुश हैं, अलमस्त हैं। वह हमलोगों का आचरण है। इसलिये हमारे देश में मूल रूप से परंपरा रही है अध्यात्म की, जबकि भौतिकवाद संसार में जीने के लिये एक सहायक तत्त्व है, और कुछ नहीं। उसकी प्राथमिकता नहीं है, वह गौण है।

पाश्चात्य जगत् ने अध्यात्मवाद को पीछे छोड़कर भौतिकवाद को अपनाया है और वहाँ की चमक-दमक को देखकर सब आकर्षित होते हैं, लेकिन जब उन्हें अंदर से देखोगे तो वे खोखले हैं। यह मैं सत्य बात कह रहा हूँ। हमलोग भले ही बाहर से अभावग्रस्त दिखलायी देते हैं, लेकिन भीतर हम सब धनी हैं। यहाँ एक गरीब को खाने को नहीं मिलता है तो कहता है – 'यही ईश्वर की इच्छा थी मेरे लिये' और जीवन में तृप्ति और संतोष का अनुभव करता है। अमेरिका में अगर ऐसे ही गरीब को एक जून खाने को नहीं मिले तो वह बंदूक या छूरा निकालकर, लोगों को मारकर उनकी जेब से पैसा लेकर के रेस्तोराँ में जाकर खाना चाहता है। भौतिकवाद में एक गरीब हत्या करता है और अध्यात्मवाद में गरीब कहता है, 'आज यही ईश्वर की इच्छा थी।' दोनों में कौन उत्तम है? जिसने अध्यात्मवाद से अपना संबंध जोड़ा है, और यह परंपरा शुरू से हमारे यहाँ रही है, सतयुग से लेकर कलियुग तक।

हमारे ऋषि-मुनियों ने हमेशा यह संकेत दिया है कि संसार में सब कुछ करते हुये भी समय निकाल कर तुम स्वयं को अपने भीतर स्थित परमात्मा से जोड़ने का एक प्रयत्न प्रतिदिन अवश्य करो, भले ही पाँच मिनट हो, भले ही नाम लेकर हो। तपस्या नहीं कर सकते हो मत करो, साधना नहीं कर सकते हो मत करो, केवल नाम से ही अपने तार को अपने आराध्य से, ईश्वर से जोड़कर रखो। हमारे मनीषियों को मालूम था कि आनेवाले युग में जब पदार्थवाद का सम्मोहन रहेगा और सब उसकी चपेट में आयेंगे, तब केवल नाम ही आधार एवं आश्रय रहेगा मनुष्य को अपने आराध्य के साथ जोड़ने के लिये।

इसीलिए कहा भी गया है कि 'कलियुग में नाम अधारा'। अगर आपके जीवन में कलियुग नहीं तो आपके लिये तो पूरे अध्यात्म का द्वार खुला हुआ है और अगर आपके जीवन में कलियुग है तो फिर केवल नाम को पकड़कर चलो। यह युग की बात नहीं है, तुम्हारी बात है। कलियुग बाहर नहीं है, अगर तुम अपने जीवन में परिवर्तन ला सकते हो, तो तुम्हारे भीतर सतयुग का उदय हो सकता है, तुम्हारे परिवार, समाज और विश्व में सतयुग आ सकता है, लेकिन अगर तुम सोचोगे कि यह तो युग का कमाल है और मुझे युग की ठोकरों को सहना पड़ेगा तो यह तुम्हारी कमजोरी है। यह युग का प्रभाव नहीं, तुम्हारे भीतर का कलि-कल्मष है। उसको दूर करो और जब तुम्हारे भीतर का कलि-कल्मष दूर हो जायेगा तो स्वतः सतयुग आ सकता है। उसके लिये युगों की, वर्षों की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी।

हमारे मनीषियों, ऋषि-मुनियों और संन्यासियों ने भी यही बात कही है और यह हमारी अध्यात्म की परंपरा को दर्शाता है। जो साधु है वह इस आध्यात्मिक परंपरा को एक जीवनशैली के रूप में अपनाता है। साधु तो कोई भी हो सकता है, एक गृहस्थ भी और एक संन्यासी भी। साधु का मतलब अच्छा और सकारात्मक व्यक्ति, अध्यात्म चिंतन करने वाला व्यक्ति। जो अध्यात्म और भौतिकता में संतुलन बनाकर चलता है वह साधु कहलाता है और साधु के गुणों को अपने जीवन में जागृत करना, समाज में सकारात्मकता को फैलाना तथा संस्कृति को सदाचरण के द्वारा बलवान्, सुदृढ़ बनाना संन्यास पीठ का उद्देश्य है।

इसलिये इस बात को अच्छे से समझ लीजिये कि संन्यास पीठ किसी को संन्यासी बनने के लिये प्रेरित नहीं करता है। अगर बनोगे तो अच्छा है, लेकिन अगर इस शिक्षा को लेकर तुम वापस जाते हो तो फिर एक जागृत मानव के

रूप में समाज में रह पाओगे। किस प्रकार की जागृति? जिसने अपने जीवन से तमस् को दूर कर सत्त्व को स्थापित किया है और सत्त्व के प्रकाश में ही वह रहता है, जीता है, सोचता है, व्यवहार करता है, कर्म करता है, खाता है, पीता है, सोता है।

यह गुरुदेव का आशीर्वाद है विश्व-समाज के लिये कि हम अपने आप को इस आध्यात्मिक प्रवृत्ति से, इस ब्राह्मी वृत्ति से जोड़ सकें। हम हमेशा तो जुड़े रहते हैं काम से, क्रोध से, छल से, कपट से, मद से, मात्सर्य से, लोभ से, घृणा से, और ब्राह्मी वृत्ति कभी नहीं आती है। जब ईश्वर का चिंतन भी करते हैं तो लोभ और कामना ही रहती है, ईर्ष्या-द्वेष का भी अस्तित्व हमारे भीतर रहता है, हम उनसे मुक्त नहीं होते। हम हमेशा काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य के षड्-रिपुओं के प्रहारों से घायल होते रहते हैं। इन छः शत्रुओं का समाधान होता है ब्राह्मी वृत्ति के द्वारा, जब तुम एक सकारात्मक भाव को अपने भीतर लाते हो। यही हमारे परमगुरु, स्वामी शिवानन्द जी का कथन भी था। वे कहते थे, हर व्यक्ति दिव्य जीवन बिताने में सक्षम है। उनके लिए दिव्य जीवन का आशय हमेशा यही रहता था कि अपने भीतर जो भी तामसिक, नकारात्मक, विध्वंसक और हिंसात्मक है, उन सबसे धीरे-धीरे स्वयं को मुक्त करो और सद्गुणों को अपने जीवन में आश्रय दो। जब सद्गुण तुम्हारे जीवन में आते हैं तब तुम्हारा जीवन स्वतः दिव्य होता है। यही शिक्षा परमगुरु स्वामी शिवानन्द जी की रही, जिनके जन्मदिवस के अवसर पर हमलोग इस पावन श्रीलक्ष्मीनारायण यज्ञ का आयोजन करते हैं।

जब हमने गुरुदेव से पूछा था कि संन्यास पीठ के तीन लक्ष्य तो मिल गये, अब इसके वार्षिक अनुष्ठान, श्रीलक्ष्मीनारायण यज्ञ को कब करना है, तो उन्होंने कहा कि मेरे प्रेरक के अवतरण दिवस पर तुम इस यज्ञ को आरंभ करो और जब उस प्रेरक ने मुझे दिव्य जीवन के आश्रय में स्वीकार किया, उस दिन तुम इस यज्ञ का समापन करो। कितना सुंदर संयोग है यह! 8 सितम्बर हमारे परमगुरु, स्वामी शिवानन्द जी का अवतरण दिवस है और 12 सितम्बर हमारे गुरु, श्री स्वामी सत्यानन्द जी का समर्पण दिवस, संन्यास दिवस है। यह पावन यज्ञ 8 तारीख से शुरू होकर 12 तारीख को समाप्त होता है जिसमें आप लोग शामिल होते हैं और प्रेरणा लेते हैं कि हम भी कुछ सकारात्मक चिंतन, व्यवहार और कर्म को अपनायें। अगर ऐसा होता है तो इस यज्ञ का आशीर्वाद आपको निश्चित रूप से प्राप्त हुआ है। ■

9 September 2022: The Mandate

Lord Narayana is the sustainer of life and is experienced in every aspect of life, from birth until death. Lakshmi, the Cosmic Mother, is the power of life, the happiness, contentment, joy and prosperity. It is under the shade of these two *shaktis* or powers that we live our life from birth to death.

The mandate

In the year 2009, when I had handed over the administrative responsibilities and duties of Bihar School of Yoga to the next generation, my guru, Sri Swamiji, called me and said, "Establish Sannyasa Peeth in Munger." I questioned, "There is already a Yogashram in Munger. Why have another ashram called Sannyasa Peeth?" He said, "This is also a necessary aspect of our sadhana. My guru, Swami Sivanandaji, told me,

'You have come to me at the age of twenty. You will serve me till the age of forty. Then you will work for my mission till the age of sixty, after that you will work for the cosmos till the age of eighty.'"

In Swami Sivanandaji's instructions, we see the progression of Sri Swamiji's spiritual life: education at home; coming to the guru and serving the guru for twenty years; then as per the mandate of the guru, working to propagate the yogic mission for twenty years; and after that renouncing everything and engaging in higher vedic sadhanas to bring peace, harmony and prosperity in the cosmos. This is a clear indication of his journey. None of you who think, 'Oh, I can also follow that path', will be able to accomplish it, for you do not have the mandate of the Master. It is not something that can be achieved by the whim of the mind, it can be achieved when there is total surrender.

Then Sri Swamiji said to me, "For forty years, from the age of ten till the age of fifty, you have been serving me and working for yoga. You have travelled the world many times over and gone to many countries. You have known thousands and thousands of people and become famous. Now you have to renounce everything. You have to stop travelling and stop working for yoga as you did in the past. You have to focus on your sannyasa life. You have to evolve and progress in your sannyasa."

That was the mandate given to me. "In order to evolve and progress in sannyasa life, you need a base. That base cannot be the Yogashram as you have handed over the responsibilities, and to propagate yoga is not your mission anymore. I am not asking you to leave yoga completely. You will have to work for yoga, develop yoga and experience *yoga vidya*, the subject, science and knowledge of yoga, about which you have spoken, yet have had no experience of." This is very true. I asked him, "What will be the path and focus of Sannyasa Peeth?" He said, "The focus is for sadhus, society and culture. Develop and propagate it."

Sadhu

Sadhu means a pious and positive person, who is full of the qualities of compassion, sympathy, cooperation, support, who is kind, sympathetic and loving. A sadhu is not a God-fearing person but a God-loving person. People say that one has to be God-fearing, and think that it means respecting God. How can you fear God? If you respect God, you cannot fear God. If you respect God, you love God. If you do not respect God, then you fear God. There is no such word as God-fearing, yet there is a beautiful word – God-loving. That is sadhu, the pious person, who loves God and works to fulfil the mandate of God.

The mandate of God is not to have twenty children or twenty million or billion in your bank account, it is to serve and love each and every sentient being, and protect the insentient. This is the mandate of God for humanity. It is a statement given by yogis and sannyasins since time immemorial: Love each other. Help each other. Support each other. Be happy, be kind, be compassionate, be loving and be giving. This has been the message conveyed by the spiritual masters throughout the ages. People acknowledge these beautiful words, yet they never follow them in life.

A sadhu is a person who follows the mandate of God and not the whim of the mind. The mandate of God is fulfilled

when one becomes selfless. The whims of the mind are fulfilled when one becomes selfish and self-oriented. Sadhu is a person who has risen above the selfish dimension, the self-oriented nature, and is connected with the selfless nature. He is caring for all of God's children, for humanity, for all sentient beings and not only human beings. This quality has to be cultivated.

Society

According to the Indian tradition, the focus of society is balance between the spiritual and material. If this balance can be maintained, there is upliftment, growth and development of human society. If this balance is not maintained and one becomes attracted too much to the material side or spiritual side, there is conflict of intention and aspiration. If there is conflict of intention and aspiration, there is definitely no harmony. Therefore, in society there has to be a balance between the material and the spiritual aspects of life.

This has been taught in the Upanishads, Vedas and Puranas. Indications have been given on how to live a better life, what to avoid and what to acquire, what to cultivate and what to shun. Our Paramguru, Swami Sivanandaji, has been clear in saying, 'The positive has to be cultivated and the negative has to be transformed. If you cannot transform the negative, ignore it, but focus on the positive.' This is his teaching of pratipaksha bhavana, which is for the development of the society we live in.

Culture

The third focus is culture. What is culture? Is music culture or an expression of culture? Is knowledge and the arts culture or expression of culture? Culture is an expression of the beautiful that you have inside you. It is the expression of the most beautiful nature that you are. That is the truth. If you are obnoxious, negative, destructive, people will say that there is no culture in your life. If you are positive and creative, people will say, 'This person is a cultured person.' Culture always represents the expression of the good, kind and benevolent. ■

9 September 2022: More Than Just Two Dreams

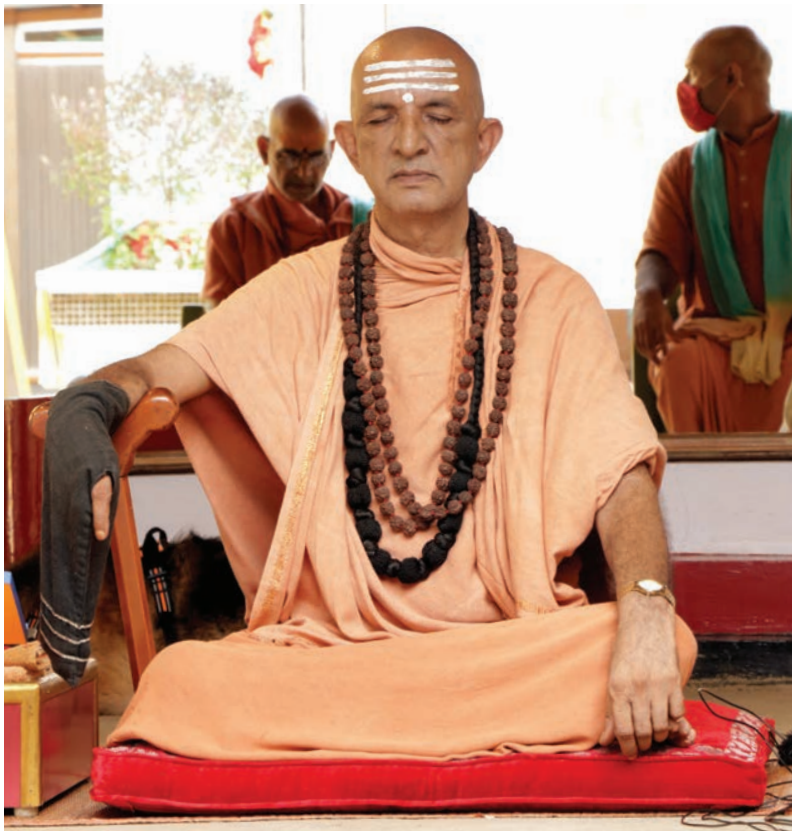

I feel that in some inexplicable way the grace of Guru and the grace of God is here. One has to be sensitive to realize it, yet it is difficult to be sensitive due to the dross of the mind. Everybody cannot experience grace due to the dross of the mind. The experiences happen at the subconscious and unconscious levels. Much later they filter out to the conscious level, and

then people realize that something has happened and some experience has taken place. Otherwise everything remains in the subconscious and unconscious levels.

From Rikhia to Munger

In the night of the 6th after completing our Guru Bhakti Yoga anushthana, I had a dream. In the dream I had gone to Rikhia when Paramahamsaji used to live there in absolute isolation to perform his panchagni sadhana. Nobody was around.

After paying my respects to Paramahamsaji in panchagni, he looks up at me and says, "Prepare the car. I am going to Munger. Take me to Munger." I go to the car park and do not find any car parked there, not even the car in which I had come to Rikhia. The whole place is empty. There is just one scooty. I go back to Paramahamsaji and tell him, "There are no cars. Only one scooty is there." He says, "Doesn't matter. You drive the scooty, I will sit behind you."

As instructed, I start the scooty. He sits behind me. As we are leaving the gates of Akhara, I tell Swami Mantrabindu, "Locate a car so that I can bring Swamiji to Munger in a car and not on scooty. If you locate the car, come as fast as you can. Find us on the road, and we will exchange vehicles." Saying this, I start driving the scooty with Paramahamsaji sitting at the back. When we come down from the mountains to the plains of Bihar, there is a point known as Jalebia More. There I see Swami Mantrabindu holding the reins of a horse. I stop the scooty, "Where is the car?" He says, "I could not find any car, but I have come with a horse." The horse is beautiful. It is white and Arabian looking, tall, slim, fast and beautiful . . . Paramahamsaji looks at the horse and says, "I'll ride on that, I will sit behind you."

So we get on the horse, and the scooty is sent back to Rikhia. Paramahamsaji and I ride to Munger on this white horse. At the outskirts of Munger, there is a T-section. The left side goes to Munger town, and the right side goes to Sita Kund, the warm spring water tank. Mythologically, Sitaji, the consort of Sri

Rama, had taken a bath there. Sita Kund has continuously hot water. The other four tanks besides have cold water and Sita Kund is in the middle. It is a miracle that the other four *kunds* or tanks have cold water, and only one tank has hot water.

I turn the horse to the right side and as we reach Sita Kund, there are thousands and thousands of people from the town of Munger. All the acquaintances we have known since the early or late 1950s to the 1960s and 1970s are present. The present devotees are also present. Some are singing bhajans, some kirtans, some are chanting mantras, some are doing havan. Everybody is waiting for Sri Swamiji to arrive. When they see Paramahamsaji, they come to greet him and he greets everyone. One of the pandits brings a bucket and a mug, and Paramahamsaji takes it, goes to the Sita Kund, sits on the steps of the tank, fills the bucket with the hot water, and with the mug pours the water on his body and has a bath.

While he is having bath, I am looking around as to who has come from Ganga Darshan. I find Sivachittamji, Ratnashakti and Devtattwa. I call them, "Listen, go back to Ganga Darshan. Prepare the 6th floor room where Sri Paramahamsji stayed before leaving the ashram; prepare Vrindavan, the place where I am and which is in isolation; and prepare 3rd floor of Paduka Darshan. Paramahamsaji can stay wherever he wants to." They get in a car which is driven by Rajan, the driver. It is an old, red, bashed-up, dented sports car. I say, "What happened to the ashram cars?" They say, "This is the only car we could find." I say, "All right go back, prepare everything and I will come with Paramahamsaji."

After the bath is over, Paramahamsaji gets up and again climbs on the horse. I sit in front and we start riding the horse towards Ganga Darshan, in a slow pace. The thousands of people who had gathered, follow and the bhajans and kirtans rent the air. It is like a procession of thousands of people from the entire town of Munger. As we enter the town, people come out of their homes and from the rooftops shower flower petals on Paramahamsaji. They come out of their homes to greet him

and in this manner we reach Ganga Darshan. I say to myself, "I'll get down first and help Paramahamsaji get down from the horse." When I turn to Paramahamsaji, he is not there. I was the only one sitting on the horse, I enter the gates of Ganga Darshan, and the dream ends.

This was a dream. I could have said, "Nice dream. I had darshan of my guru, and that's the end of it." It could have been a simple dream, but . . . At around 7 am I receive a message from a person in Bombay, 'I woke up thinking that I have to gift you a Mercedes car,' and along with this message, he sent me the picture of a red Mercedes. In my dream I had seen the red sports car. I said to myself, 'This is a bit of a coincidence.' In my dream, I was looking for a car for Paramahamsaji, and the only car in the dream was an old, bashed-up red sports car, and then the first message was somebody wanting to gift a red car.

Later when some residents were going up to 6th floor of Main Building somehow my antennas went up and I told them, "If you see anything unusual, inform me and don't touch anything." That sentence came out from nowhere, for every day people go up and I never say things like this. When they went up and opened the door of Paramahamsaji's room . . . the almirah door where his clothes are kept was open, his socks were hanging out of the almirah, his turban which he used to wear during programs was put on his chair, a geru dhoti was placed on his bed. This was the sight that we all saw when we went for darshan.

What was this? Was it a dream, or something real that happened? It was the darshan of Paramahamsaji and his presence at Ganga Darshan. Everyone in the ashram was invited to be a witness of this darshan. They did not have the dream, yet they saw the outcome of the dream.

With Swami Sivananda in Rishikesh

Last night I had another dream. I was in Rishikesh. The centenary celebration of Paramahamsaji were happening and one of the locations of the celebration was Rishikesh.

People had come from every part of India, and international participation was also huge. We could not have the program at Sivanandashram, as they had no space for the number of people who had gathered for the celebrations of Sri Swamiji's time in his guru's ashram. So we had pitched a big tent where we were conducting the program.

After conducting the program, I decided to have a quiet walk along the banks of the river Ganga, remembering the days that Sri Swamiji had spent in Sivanandashram, and trying to look for his footprints on the sand beside the river Ganga. I came to Sivanandashram where everything was painted white with *chuna*, as was the old tradition – the boundary walls were white, the buildings, the rooms, everything was pure white. I remember the white horse of my previous dream.

There was a small door in the boundary wall. I knocked on the door and one sannyasin of Rishikesh opened the gates. He knew that we were celebrating the centenary of Sri Swamiji in Rishikesh and he welcomed me in. I asked him, "Is Gurudev here?" meaning Sri Swami Sivanandaji. He said, "Yes, he is in the room. You will have to wait for some time. When he comes out, you can have his darshan." As I was walking in the gardens of the Rishikesh ashram I came upon a room. In that room, there was a lot of light and energy radiating. It felt like an electric current. I knew that Swami Sivanandaji was inside the room. I waited outside.

Then the doors opened and I walked in, Swami Sivanandaji was sitting on a big chair, facing to his right and talking to people who were standing around him. Everyone was about seven to eight feet away, for the energy was so intense that nobody could get close to him. When I tried to touch his feet and do my pranam, I could not. So I also sat down quietly about six feet away. I was watching Swami Sivanandaji interacting with people, and it was exactly as Paramahamsaji used to describe – multi-tasking.

Then Swami Sivanandaji turned his head, looked at me and said, "Your introduction?" "My name is Swami Niranjanananda.

I am also known as Swami Niranjan. I am a disciple of Swami Satyananda. I am your grandson." The smile and the look in his eyes is something I cannot forget. It was so tender, so welcoming, so beautiful. He took his left hand and put it on my head. I just felt a rush of energy from the top of the head, right through my body. Some great energy had entered the head and pervaded the whole body. I was transfixed and could not move.

Then he started asking, "Where is Satyam? How is my Satyam?" I answered, "He is fine." "Where is he?" I said, "He is not here today." Then he said, "Come, let's walk to the dining room. It is my meal time." He got up and there were steps going up and steps going down. He started climbing up and down those steps in a slow, unsure gait. I looked around for any of Sri Swamiji's helpers. Nobody was there to help and support him. So I went behind Swami Sivanandaji, and as he was climbing down I grabbed his arms from the back to ensure that he would not falter or sway. It was all a dream, yet the touch was of flesh and blood. Even now I can feel the softness of his arms and body. He said, "Come to my side." On his left side was the railing, so I went to the right side and grabbed his arms with both hands and we came down the stairs.

In his dining room, I take him to a table and he sits on the chair. A thali is in front of him, not a small one but a big one. One of the devotees of Swami Sivanandaji brings the food and tells me to serve him. Here I am serving Swami Sivanandaji who is looking at the food and saying, "Okay, enough. This much is okay. Give me that. Give me this. Enough is enough." It is a simple, natural interaction. While he is eating, I look out of the gate and I see the delegates of the convention who have come to the Annapoorna hall for a meal. I see people from

Colombia, Europe, France, Germany, England. I see sannyasins from India, Swami Gorakhnath, Swami Vajrapani, all the old and new people. I ask Gurudev Swami Sivanandaji, "There are many people outside who want to have your darshan." He says, "Call them in and introduce them."

I introduce them one by one, "This is Swami Gorakhnath, he is looking after the Bokaro ashram. This is Swami Vajrapani, he is looking after the Chennai ashram. This is swami such and such, he is looking after this ashram. This is swami such and such, who lives in Munger.

Then there are Colombians, Ignacio and Maria Teresa, with their children. I call them, and Ignacio, Sannyasi Agnideva says, "I cannot confront Swami Sivanandaji. There is too much energy. My heart is palpitating." He just sits down white-faced, "There is so much energy, I cannot handle it." There were Australians, Greeks, people from South America. I call each one of them and introduce them to Sri Swami Sivanandaji, and he looks at all of them. Then he says, "I have finished my lunch. Now take me to my room. I am going to rest." All the delegates hold hands and make a passage. Swami Sivanandaji walks looking at each one to their face, smiling at them and then sometimes raising his arms in blessing, and keeps on walking. That was the dream.

It was not a dream for me. When I woke up I could still feel his body, I could feel his back against my chest. It was not a feeling, it was an actual experience of flesh, bones, body heat, sweat, everything. And the smell of his body . . . it was a fragrance like incense. I woke up in the morning at 3:30 with that fragrance in my nose and with the feeling that I have just held in my hands our Paramguru, Sri Swami Sivanandaji. He did not come here; we all had gone to Rishikesh. ■

10 सितम्बर 2022 – गुरु शिष्य संबंध

इस श्रीलक्ष्मीनारायण यज्ञ के दौरान पूज्य गुरुदेव और परमगुरुदेव की जो अनुभूति हुई है और उनका जो दर्शन हुआ है, उसने मन में विचारों की एक शृंखला को शुरू किया है और एक चिंतन हो रहा है कि वास्तव में गुरु और शिष्य का संबंध कितना अनुपम और अद्वितीय होता है। लेकिन लोग इसको समझते नहीं हैं और आत्मसात् भी नहीं कर पाते हैं। चेला तो अनेक बनते हैं, लेकिन शिष्य कोई नहीं बनता। चेला का मतलब होता है, काम चलाना है और शिष्य का मतलब होता है, जो अपने शीश को समर्पित करता है।

गुरु गोविंद सिंह ने एक बार एक तंबू गाड़ा और अपने अनुयायियों से कहा कि जो मरना चाहता है वह इस तंबू में आए। एक-एक करके पाँच लोग गुरु गोविंद सिंह जी के साथ अंदर जाते हैं, जिनके हाथ में नंगी तलवार रहती है। कुछ समय पश्चात् गुरु गोविंद सिंह जी बाहर आते हैं और उस तलवार में रक्त दिखलायी देता है। सब सोचते हैं कि गुरुजी इनको तंबू के भीतर मार रहे हैं, लेकिन जो दृढ़ विश्वासी अनुयायी थे, वे अंदर जाते हैं। अंत में फिर गुरु

गोविंद सिंह बाहर आते हैं और आवाज देते हैं। वे पाँच शिष्य बाहर निकलते हैं, जीवित। किसका गला कटा था? एक बकरी का। इन पाँच लोगों को गुरु गोविंद सिंह जी पंच-प्यारे कहते हैं और उनको शिष्य कहते हैं।

हमारे गुरुजी ने एक बार हमसे कहा था कि देखो, अपनी कामना और अपनी वासना के लिये तो सब मरने को तैयार होते हैं, लेकिन गुरु के लिये मरने को बहुत-ही कम लोग तैयार होते हैं। सब अपनी वासना के लिये मरते हैं, सब अपनी कामना के लिये मरते हैं, लेकिन गुरु के लिये कोई मरना नहीं चाहता। यह बतलाता है कि हमारा समर्पण कितना अपरिपक्व है। हमारा समर्पण अज्ञान से लिप्त रहता है, और वास्तव में हम क्या समर्पण करते हैं? कुछ नहीं, बल्कि अगर इतिहास को देखोगे तो चेला ही गुरु का सबसे बड़ा आलोचक होता है और वही गुरु का त्याग करके बाहर में गुरु की बुराई करता है।

शिष्य अपने को हमेशा गुरु के समकक्ष मानता है। शिष्य हमेशा कहता है कि मैं ही प्रिय हूँ, लेकिन यह तो उसका अज्ञान है, अहंकार है। ऐसे शिष्य गुरु के आलोचक होते हैं, जो बाहर जाकर कहते हैं कि गुरुजी में ये दोष हैं, वे तो ऐसा करते हैं, वैसा करते हैं, वे आदर्श के विपरीत हैं। इस प्रकार हमेशा आलोचना के द्वारा गुरु को गलत साबित करने और खुद को सही साबित करने का प्रयास करते हैं। तो क्या ऐसे व्यक्ति शिष्य हैं, समर्पित हैं? हम तो ऐसे भी संन्यासियों को जानते हैं जो संन्यास लेकर आश्रम छोड़ देते हैं क्योंकि खिचड़ी-दाल ही मिलती है और किसी दूसरी संस्था में चले जाते हैं, क्योंकि वहाँ पर भोजन अच्छा मिलता है, लड्डू-पकवान मिलते हैं। जिस व्यक्ति के भीतर इस प्रकार की वासना है, वह किस प्रकार का शिष्य है?

गुरु तो इस विश्वास के साथ दीक्षा देते हैं कि तुम अब पढ़ाई करके पास करोगे, लेकिन शिष्य डिग्री मिलने के पश्चात् सोचता है कि वह सर्वसमर्थ है। गधे को अगर शेर की खाल पहना दी जाए, तो गधा शेर नहीं बनता। उसी प्रकार से किसी व्यक्ति को गेरू वस्त्र पहना दिया जाए तो वह संन्यासी नहीं बनता। जैसे गधा शेर की खाल पहनकर भी ढ़ेंचू-ढ़ेंचू करते रहता है, वैसे ही एक गैरिक वस्त्रधारी भी गैरिक वस्त्रों को पहनकर उसका सम्मान, गुरु का सम्मान न करके अपनी वासना और कामना के तृप्ति के लिये ही भागते रहता है और ऐसे शिष्य चाहते हैं कि मेरा अच्छा आश्रम बने, मेरे चेले भी हों, मैं प्रसिद्ध हो जाऊँ। जो अपना आश्रम बनाना चाहता है, जो प्रसिद्ध होना चाहता है, जो चेलों की भीड़ जमा करना चाहता है, वह कैसा समर्पित शिष्य है?

जब हम श्री स्वामीजी के अपने गुरु के साथ संबंध को देखते हैं तो प्रेम, निष्ठा एवं समर्पण का एक अद्भुत चरित्र दिखलायी देता है। खुद को भूलकर जब हम अपने आप को समर्पित करते हैं तो वही हमारे लिये अंतिम सत्य होता है और इस सत्य के साथ दूसरा भ्रांतिपूर्ण सत्य चल नहीं सकता है। लेकिन यह बहुत कठिन है और लोग इसे समझ नहीं पाते हैं, बल्कि बहाना बनाते हैं कि हम जैसे हैं गुरुजी ने वैसे ही हमें स्वीकार किया है। अरे, अगर गधे को शेर की खाल पहना दोगे तो वह शेर तो बनता नहीं है, बोझ ही ढोता है, और अगर बोझ ही ढोना है तो फिर शेर की खाल क्यों पहनना? गधे का ही स्वरूप लेकर चलो, लेकिन अगर गुरु तुम्हें शेर की खाल पहनाता है इस विश्वास के साथ कि तुम शेर बन सकते हो, तो बनने का भी तो एक प्रयास करो, क्योंकि गुरु ने तुम पर विश्वास किया है और तुम अविश्वासी हो। इसलिये हमने देखा है कि शिष्य की तरक्की नहीं होती है, न आध्यात्मिक न भौतिक। वह जहाँ का तहाँ पड़े रहता है और अंत में अपने जीवन को ही कोसता है कि मैंने अपना पूरा जीवन व्यर्थ गँवाया, मेरे पास अंत समय में न कुछ संपत्ति है, न चेले हैं, न छोटी-सी कुटिया या आश्रम है। चेला लोगों की ऐसी मानसिकता होती है।

इसीलिये कहा जाता है कि हर गुरु को एक ऐसे शिष्य की तलाश होती है, जो उसका हो सके और गुरु उसमें स्वयं को समाहित कर सके। श्रीरामकृष्ण परमहंस के अनेक शिष्य थे, लेकिन जब वे नरेंद्र को देखते हैं, तो एक ही वाक्य उनके मुँह से निकलता है, 'कब से मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ!' अनेक शिष्यों में नरेंद्र ही स्वामी विवेकानन्द बनकर गुरु की आध्यात्मिक ऊर्जा के साथ एकाकार हुये। स्वामी शिवानन्द जी के भी अनेक शिष्य रहे, लेकिन उन्होंने स्वामी सत्यानन्द जी को अपना वास्तविक शिष्य और उत्तराधिकारी माना और ऐसा कहा भी। अगर हम इतिहास को देखते हैं तो हजारों-लाखों में शायद इक्के-दुक्के ही होते हैं, जो पूर्ण निष्ठा, समर्पण, भक्ति, श्रद्धा और विश्वास से युक्त होकर स्वयं को समर्पित करते हैं। श्रीरामचरितमानस में लिखा है –

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम्॥

तुम सिद्ध हो सकते हो, लेकिन ईश्वर का दर्शन नहीं कर सकते हो, तुम कुछ चमत्कार भले ही कर दो, लेकिन ईश्वर का दर्शन, ईश्वर का अनुभव कभी नहीं होगा, जब तक तुम्हारे भीतर श्रद्धा और विश्वास न हो।

शिष्य की महानता यही होती है कि वह स्वयं को छोड़कर गुरु से एकाकार हो और शिष्य की दुर्गति तब होती है, जब वह चाहता है कि गुरु मेरे सभी कर्मों से सहमत हो और उनका सहारा मुझे मिलता रहे ताकि मैं उच्च पद को प्राप्त कर सकूँ, गद्दी पर बैठ सकूँ। बुरा नहीं मानना, लेकिन इतिहास में और वर्तमान में भी देखा गया है कि अनेक शिष्य लोग अपने गुरु को हटाने के फेरे में रहते हैं ताकि वे गद्दी पर बैठ सकें। क्या यही हमारी आध्यात्मिक संस्कृति है? क्या यही ईश्वर के प्रति हमारी श्रद्धा है? क्या गुरु के प्रति यही हमारा समर्पण है? मन में काला रंग पुता हुआ है, जिसे कोई साफ नहीं करना चाहता, बस काले रंग के ऊपर ही सफेद रंग को चढ़ाना चाहता है, ताकि वह साफ-सुथरा दिखे। लेकिन भीतर तो काला ही रहता है और कालेपन में ही हमारा पूरा जीवन बीतता है।

अगर कोई उस कालेपन को दूर करने के लिये सैंड-पेपर से दीवार को घिसना शुरू करे तो आदमी चिल्लाता है – 'मुझे घिसो मत! अगर ज्यादा घिसोगे तो मैं छोड़कर चला जाऊँगा।' गुरु को धमकी देता है कि मैं छोड़कर चले जाऊँगा। कहाँ जाओगे? चार धाम की यात्रा करूँगा। अरे जाओ न! गुरु को तुम्हारी आवश्यकता नहीं है, बल्कि तुम्हें गुरु की आवश्यकता है। अगर इस सत्य को स्वीकार नहीं कर सकते हो तो मरो, और अगर इस सत्य को स्वीकार कर सकते हो तो जियो। वही जीवन है, और इस जीवन को बहुत-ही कम लोग जी पाते हैं और जो जीते हैं, वे ही वास्तव में असंख्यों की संख्या में एक होते हैं, जिन्हें हम गुरु कहते हैं। जब भी हम अपने गुरु, श्री स्वामीजी और अपने परमगुरु, श्री स्वामी शिवानन्द जी के विषय में चिंतन करते हैं तो हमें केवल उनकी निष्ठा दिखलायी देती है, गुरु आज्ञा के प्रति उनका समर्पण दिखलायी देता है। अपने को भूलकर जो गुरु मिशन के प्रति अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देता है, वही शिष्य कहलाता है। ■

10 September 2022: Sannyasa

Sannyasa is not an institution but a lifestyle. This is the traditional and classical interpretation of sannyasa. Modern people in their ignorance of the aims and objectives of sannyasa relate it to monkhood, and the ashram to a monastery, yet it is not so. From the time the idea of sannyasa generated in the minds of people, it took the form of a lifestyle to discover oneself and spirituality within. Religions say, 'Believe,' sannyasins say, 'Discover.' If you are a follower of a religion, you have to believe, if you are a follower of the lifestyle of sannyasa, you have to discover – and this is the main difference between the two. What do you have to discover? Oneself? The soul? The spirit?

One can have lofty ideas like 'I want to realize God', 'I want to realize myself and attain self-realization' or 'I want to achieve emancipation.' These ideas are never translated into practical life due to the restrictions and conditions of the mind. My guru, Swami Satyanandaji, states clearly that the life which we live is what we live in our own minds. The life we live is not free from the expressions and grip of the mind. The insecurity you feel in your life is expressed by the mind. The joy you experience in your life is expressed by the mind. The frustration you express in your life comes from the mind. The compassion you look for is also coming from the mind. Our life is never free from the mind. Mind is life. Life is mind.

So where is the understanding of spirit? When we cannot understand our own mind, how can we understand what is beyond mind? We cannot. Therefore, spirituality remains a lofty idea. As sannyasins and spiritual aspirants, we have to transform the limitations of the mind. That is the beginning of our spiritual journey. Meditation is not the beginning of the spiritual journey, for you are meditating in the confines of your own mind. You can drill a hole in the wall of the mind to see

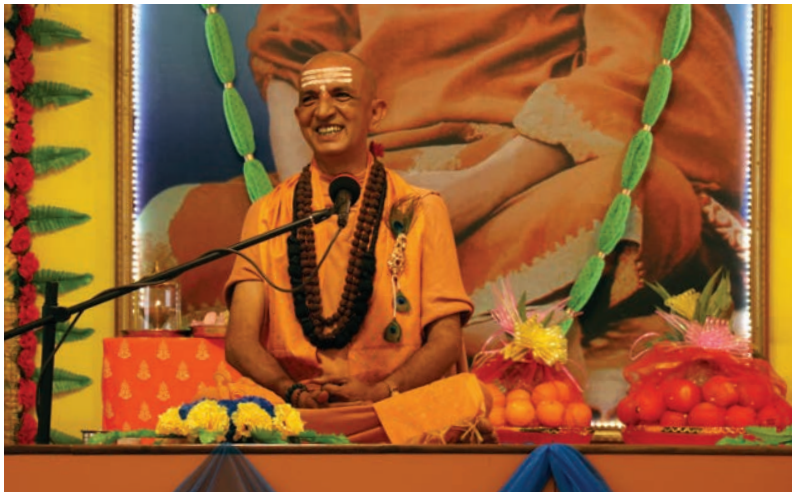

what lies outside, and even see the sun. You can say the sun is bright and luminous, the sun is the giver of warmth and fire. You can interpret the image that you see through the hole. You may be right, yet while you are interpreting what you see, you are still in the confines and darkness of your mind. When you come out of your meditation, you confront again the same negative, restrictive nature, the tamas of life. So where was the spiritual awareness? Where is the spiritual gain?

Spiritual life does not begin until you make the effort to transform the nature and quality of the mind from negative to positive. Therefore, the journey that we undertake in spiritual life is from tamas to sattwa. When we are in a state of tamas, we are bound by the dictates of the various expressions of ourselves. We have to observe, realize, harmonize and harness them. We have to continue our journey towards spirituality, positivity, luminosity and light. The purpose and focus of the sannyasa tradition is to transcend limitations, attain mental balance, emotional harmony and explore the inner dimension. To transcend the negative experiences and develop the awareness of the positive is a challenge for everyone. You can avoid it, but you cannot negate it. Negative experiences will continue to exist for all times to come.

Sannyasins have to face this challenge when they are living the lifestyle of sannyasa. This happens through 'sam' plus 'nyas'. *Nyas* means to place everything in trust. *Sam* means total – one has to place one's total energy and effort, one's total awareness and quality to transcend the limitations of the self. When you are able to place this total to transcend the limitations of the self, all your efforts and energy go into that trust and it becomes sannyasa. That is the meaning – to pursue the exploration of life and create a creative and joyous condition in life. Sannyasa is not about a rigid discipline but about the awareness of how to know the right, do the right and live the right and appropriate.

Sri Swamiji said that these qualities are the focus a sannyasin must cultivate. Only the study of scriptures is not enough, for only knowing does not alter anything in life. We know what is right and we know what is wrong. Are we associated with the right and disconnected from the wrong? No. On the contrary, we are influenced by the wrong and ignore the right. This awareness has to change for if it does not change, it takes us on the path of darkness which is Kali Yuga. Where is the darkness? Is it in the world? Is it in the universe? Or is it in our own nature and mind? If the darkness is within us, why can't we make the effort to shine light into that darkness? The darkness of eons in a cave goes in one instant, the moment you strike a match. That is the power of light and luminosity.

It is no use blaming Kali Yuga for the negative and destructive situations and conditions that we face around us. If we are able to transform our own selves, the darkness within, by striking a single match, luminosity will come instantly and darkness will be removed. There will be happiness and joy and it will be Satya Yuga, the connection with truth, light and luminosity that we are all searching for. Experiences are within oneself, we have to realize it and make the effort to live a life which is conducive to experiencing the light. Since time immemorial the life which is conducive to experiencing the light has been the path of sannyasa.

Sannyasa Peeth provides exposure to different systems and traditions, arts and creative expressions. During Chaturmas these exposures happen to develop the understanding and expression of the spiritual dimension, and experience it through all activities. Similarly, this exposure expands awareness, generates spiritual samskaras and creates the feeling of oneness with life. That is the purpose of Chaturmas which becomes the platform to have this experience.

Lakshmi-Narayana Mahayajna, aradhanas and other yajnas elevate the mind through mantras. People who have been participating in this aradhana have seen the change come within them over the last four days. What was the mental state before and what is it today? The mind and spirit is elevated. The experience of mind happens through mantras and it is powerful. We harmonize the mind through mantras and satsangs, which is another attainment. We connect with the positive, disconnect from the material and reconnect with the spiritual. These are the different dimensions of experience. Yajnas have a purpose, for they convey the sankalpa of a sage to bring peace, plenty and prosperity. This sankalpa of a sage is the sankalpa of our Master, who inspired the yajnas and gave instructions that they must happen in order to spread wellness,

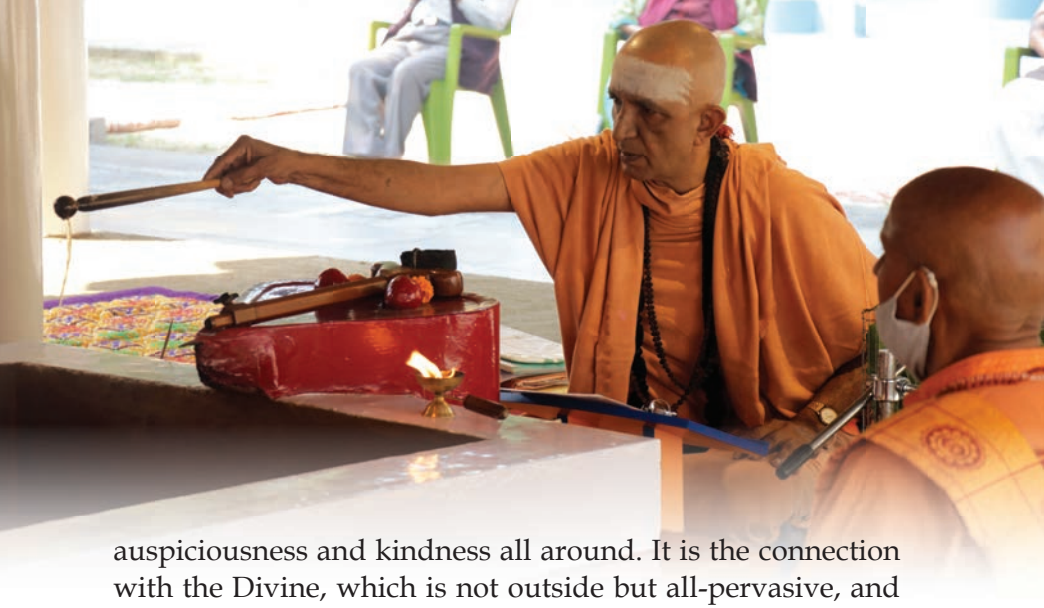

auspiciousness and kindness all around. It is the connection with the Divine, which is not outside but all-pervasive, and which is not confined by an idea or a form, but is the experience of every individual. This experience is the purpose of yajnas.

At Sannyasa Peeth, *daan*, the activity of giving, happens continuously. Daan is redistribution of material prosperity. It is reaching out to help others find their happiness, fulfilment, satisfaction, transcend selfish and lower instincts, and associate with the positive conditions in life. This is the outcome of daan. *Seva*, service, happens as an expression of love. Seva is not a simple act you want to do to help others. Seva is an expression of love. Our guru, Swami Satyanandaji, says, "Love in action is seva." These activities become different platforms and experiences to follow the spiritual path and to become a sannyasi, not a recluse or renunciate, but a sannyasi who is kind, compassionate and connected to the world. All the great masters have not been recluses. They have lived in society. They have shared the pains of society and tried to alleviate the suffering and pain of every individual. Sannyasa is a connection with each and every one, not isolation. You cannot become enlightened in isolation, yet you can become enlightened when you are with everyone and connected to everyone. I have not come across any enlightened yogi from the Himalayas, yet I have come across many enlightened yogis who have lived with the masses, helped and supported

the masses to overcome their pain and suffering. That is the sannyasa tradition and sannyasa system.

Sannyasa Peeth has started the first activities this year with Sannyasa Lifestyle Experience. The participants have been having a good time, exploring and discovering their shortcomings, and making the effort to overcome them with joy and positivity. That is the aspiration and goal of everyone. Sannyasa training does not mean that you become a sannyasin, but that you carry the culture with you wherever you are. To imbibe the culture, training is necessary no doubt, yet finally you have to carry that culture with you. That culture is your life, it is your lifestyle, thinking, performance and expression of the positive.

This has been the message of Sannyasa Peeth, and the message of our gurus, Sri Swami Satyanandaji and Sri Swami Sivanandaji. Let us make a sankalpa during the Lakshmi-Narayana Mahayajna: 'We may not be sannyasins, yet we can make the effort to be positive, happy and help others who need our help to overcome their pain and suffering in life'. If we can go with this thought, divine grace will guide us. Once divine grace guides us, the spirit of Guru will be with us, holding our hand and taking us along. It is the message of this Lakshmi-Narayana Mahayajna, and it is practical sannyasa and practical Vedanta. One good deed a day becomes the ocean of goodwill in the course of time. So try to do one good deed a day and at the end you will swim in the ocean of goodwill. ■

11 सितम्बर 2022 – आत्मभाव

नारायण का वास इस संपूर्ण जगत् में होता है और यही हमारी संस्कृति की प्रथा है जो कण-कण में ईश्वर को देखने के लिए प्रेरित करती है, सूरज में, चंदा में, सितारों में, नदियों में, सागर में, पर्वतों में और सभी जीवों में। ईश्वर का वास हर कण में होता है और इसलिए हमारी परंपरा में कहा गया है –

जले विष्णुः स्थले विष्णुः विष्णुः पर्वतमस्तके।
ज्वालमालाकुले विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत्॥

हमलोग सोचते हैं कि जीवन केवल मानव जीवन होता है, लेकिन जहाँ पर न नदी है, न सागर है, न पर्वत है, न वृक्ष है, न पौधे हैं, न फल-फूल हैं, न सूर्य है, न चंद्रमा है, न तारे हैं, वहाँ पर तुम जीकर बताओ। ये सब हमारे जीवन के आधार होते हैं। मनुष्य बेवकूफ है जो सोचता है कि वही एक चेतन प्राणी है, लेकिन हमारी परंपरा कहती है कि उस परमतत्त्व का वास केवल मानव जीवन तक सीमित नहीं है, वह तो कण-कण में व्याप्त है, अतः सबका सम्मान करना, सबको सुरक्षा देना हमारा कर्तव्य और धर्म है। उसके कारण ही हमलोगों का हृदय दूसरों से जुड़ता है, कोमल बनता है और मनुष्य के जीवन का उत्थान होता है।

तुम प्रेम और सम्मान को प्राप्त करने के लिये स्वयं को जैसे अधिकृत करना चाहते हो वैसा ही अधिकार इस सृष्टि में प्रत्येक कण का है। यही हमारे गुरुजी का संदेश भी था जिसे वे कहते थे 'आत्मभाव।' जो तुम हो, जो तुम में है, वह दूसरों में भी देखो। जैसा तुम अपने लिये चाहते हो वैसा दूसरों के लिये भी चाहो, तभी हमारे समाज में शांति और प्रसन्नता आयेगी, क्योंकि हर व्यक्ति, हर प्राणी का हम सम्मान करते हैं और यह सम्मान जीव को देखकर नहीं, बल्कि उसके भीतर स्थित परमात्मा को देखकर हम उसके सामने अपना सिर झुकाते हैं।

स्वामी सत्यानन्द जी और उनके गुरु, स्वामी शिवानन्द जी का जीवन बहुत व्यावहारिक रहा और व्यावहारिक जीवन में भी वे अपने लक्ष्य को कभी भूले नहीं। वेदांत उनके लिये मात्र एक दर्शन नहीं, बल्कि एक जीवन चिंतन था, एक जीवनशैली थी। हमारे स्वामीजी के लिये योग विद्या एक विधि नहीं, बल्कि एक चिंतन, एक अनुभव और एक जीवन शैली रही। भारत की

परंपरा में संन्यासी को लोग मानते हैं त्यागी। लोग सोचते हैं कि आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिये हिमालय की किसी गुफा में बैठना है, ध्यान लगाना है, समाधि लगानी है, लेकिन मैंने आज तक किसी भी ऐसे योगी को नहीं देखा जिसने हिमालय में मोक्ष प्राप्त किया हो, बल्कि मैंने उन आत्मज्ञानियों को देखा है जो समाज के मध्य रहकर समाज के सुख और दुःख से जुड़कर उनकी सहायता में तत्पर रहे हैं और दूसरों को आगे बढ़ने के लिये प्रेरित किया है। यही हमलोगों की परंपरा है और यही शिक्षा संन्यास पीठ में विभिन्न कार्यक्रमों, यज्ञों, आराधनाओं और सेवा-कार्यों के द्वारा देने का प्रयास किया जाता है।

अगर कोई बुरा करता है तो वह उसके दुर्भावों की अभिव्यक्ति है, अगर कोई अच्छा करता है तो वह उसकी सद्भावनाओं की अभिव्यक्ति है और हमें अपनी सद्भावनाओं से जुड़ना है। जो सद्भावना से जुड़ता है, वह साधु पुरुष कहलाता है। जो सद्भावना को त्यागता है, वह दुराचारी कहलाता है, उसके आचरण अच्छे नहीं होते हैं, लेकिन जो सद्भावना से जुड़ता है वह सदाचारी कहलाता है, उसके आचरण हमेशा अच्छे होते हैं। हमारी संस्कृति यही शिक्षा देती है कि अच्छाई को अपनाओ और बुराई का त्याग करो। यह केवल संस्कृति नहीं, यही शिक्षा और यही संस्कार है इस आध्यात्मिक भारतवर्ष का जो हम सबको प्राप्त करना है। इसको लेकर हम अपने जीवन में उन्नति की ओर आगे बढ़ सकते हैं। हमें यहाँ से यही संकल्प लेकर जाना है कि प्रतिदिन हम अच्छा कर्म करने का प्रयास करेंगे और प्रतिदिन एक अच्छा कर्म जो किया जाता है, कुछ वर्षों में वह सद्भावों एवं सद्गुणों का सागर बनता है। ■

11 September 2022: The Conch

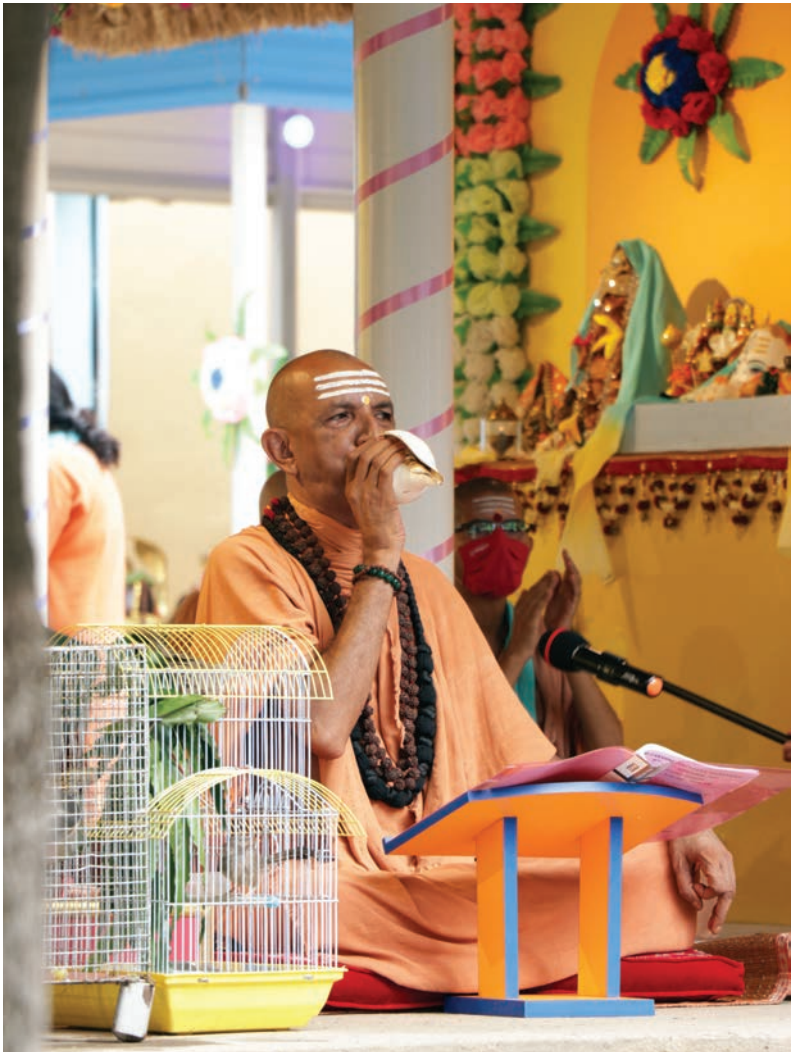

Today just before I woke up, I had a short dream. In that dream, I was in in Satyameshwar Peeth in Paduka Darshan.

The location outside was Satyameshwar Peeth, yet inside was the image of the Lakshmi-Narayana Peeth, as if Shiva and Narayana had come together. Outside was Satyameshwar and inside was Lakshmi-Narayana. The residents of Paduka Darshan were sitting outside surrounding Satyameshwar Peeth.

I walk into Satyameshwar Peeth and see Paramahamsaji standing and doing pooja to Lakshmi-Narayana. I look to Paramahamsaji who picks up a conch. It is a different type of conch – approximately one and half inches or two inches wide, and completely circular, not like a normal conch. It has holes at the top and bottom. It looks like the Sudarshan Chakra which Vishnu has in his hands, yet it still was a conch. Paramahamsaji gives me the conch and says, "Blow it." I look at this totally flat conch and I put it to my lips. It is difficult to blow properly and it makes a harsh sound. Funny sounds were coming out. Paramahamsaji takes the conch from my hand, puts it to his lips and blows . . . and what a sound! The whole area is just resounding of conch. Hearing the sound of the conch, I came out of my sleep and woke up.

Soothsayers say that what you dream in the morning comes true. So while I was in bed, I was thinking, 'What is the meaning of this incredible conch sound and the dream of Paramahamsaji?' In the tradition, Narayana is always holding a conch in one of his hands. Mother Lakshmi also holds *shankha, chakra, gada, padma,* a conch, chakra, mace and lotus.

Inside is Lakshmi-Narayana Peeth and outside is Satyameshwar Peeth. Shiva is a devotee of Narayana and Narayana is a devotee of Shiva. They complement each other and are always together. The conch has a special meaning, for it heralds a beginning and an end. It is blown before and after any activity, worship and invocation. At the same time, the sound of the conch clears the area of mosquitos, flies, insects, viruses and bacteria. It is said in the scriptures and has been scientifically proven that when a conch is blown evil and bad energies in the air including viruses and bacteria disappear. The sound of

the conch makes them run away. When Paramahamsaji blew the conch, it was to push away all the bad that can happen and to allow the good to come. That was my interpretation. I consider it to be a blessing of Paramahamsaji to all the residents of Paduka Darshan to clear dross and negativity.

Today I cannot stop myself from blowing the conch. I only blow the conch during my panchagni sadhana and since then I have not blown it even once. Today, after having the dream of the conch, was the first time after panchgani that I had the desire to blow as Paramahamsaji had given me the conch and I could not blow it in the dream. I also know why I could not blow it, for it was not an ordinary conch. It was the Sudarshan Chakra of Vishnu in the form of a conch. Only another form of Narayana can blow it, no human can, and the other form of Narayana is my guru, Sri Swamiji.

It has been a beautiful start with the auspicious events happening, and it fills the heart with joy and peace. I am feeling only joy and peace. No words, no thoughts are coming in my mind. Only the sound of the conch which was blown by Paramahamsaji is resounding in my head. ■

11 सितम्बर 2022 – दिव्य शंखनाद

आज भी एक बहुत अद्भुत दिन प्रतीत हो रहा है और इसका संकेत सवेरे से मिल रहा है। प्रातःकाल जगने से पहले एक स्वप्न जैसा दिखा जो संभवतः चार-पाँच मिनट का ही रहा होगा। उस स्वप्न में हम पादुका दर्शन में थे और पादुका दर्शन के निवासी सत्यमेश्वर पीठ के बाहर बैठे हुये थे। हम गाड़ी से उतर कर भीड़ को देखते हैं और सत्यमेश्वर पीठ में प्रवेश करते हैं। लेकिन भीतर का दृश्य लक्ष्मीनारायण पीठ का था, बाकी सब देवी-देवता अदृश्य हो गये थे। सत्यमेश्वर, गणेश जी, श्रीयंत्र, सब गायब थे, अंदर केवल लक्ष्मीनारायण पीठ का स्वरूप था, और बाहर सत्यमेश्वर पीठ का स्वरूप था। लगा जैसे नारायण शिव में समाहित हैं और शिव नारायण में।

हम अंदर प्रवेश करते हैं तो देखते हैं कि पूज्य गुरुदेव, श्री स्वामीजी वहाँ पर गेरू धोती पहनकर लक्ष्मीनारायण जी की आराधना कर रहे हैं। उसके बाद श्री स्वामीजी हमें एक शंख देते हैं, जिसका रूप बड़ा विचित्र था। वह सामान्य शंख की तरह नहीं था, बल्कि चपटा हुआ शंख था। फिर श्री स्वामीजी हमसे कहते हैं कि इसे बजाओ। हम उस शंख को मुँह के सामने रखकर बजाने का प्रयास करते हैं, लेकिन बहुत अटपटी आवाज निकलती है, फूँकने से केवल हवा ही निकल रही है और हम उसको बजा नहीं पा रहे हैं। शंख का स्वरूप वास्तव में चक्र जैसा था। जैसे भगवान नारायण की उंगली पर सुदर्शन चक्र होता है, वैसा ही था, बस ऐसा सोचिये कि वह सुदर्शन चक्र दो इंच मोटा और करीब चार इंच चौड़ा है और बीच में छेद है। तब श्री स्वामीजी ने हमसे वह शंख लिया और उसे फूँका। उससे जो ध्वनि निकली वह गजब की ध्वनि थी। ऐसी अद्भुत ध्वनि जिससे पूरे शरीर में रोमांच हो जाता है! निद्रा देवी ने भी शायद वह ध्वनि सुनी होगी, कहा कि 'बेटा! उठो जल्दी से, स्वामीजी शंख बजा रहे हैं' और उस ध्वनि के साथ फिर निद्रा टूटती है।

निश्चित रूप से उस समय विचार आया कि यह कैसा शंख था। तब मन में विचार आया कि हमारी परंपरा में भगवान नारायण और माँ लक्ष्मी अपने चतुर्भुज में एक शंख को धारण करते हैं – सौम्य रूप में हाथ में कमल रहता है और योद्धा रूप में शंख, चक्र, गदा और पद्म रहता है। गुरुदेव लक्ष्मी-नारायण की पूजा कर रहे हैं और पूजा के पश्चात् उसी सुदर्शन शंख को लेकर हमें देते

हैं और हम उसे नहीं बजा पाते हैं, क्योंकि ईश्वर का शंख एक मनुष्य क्या बजा पायेगा? उस शंख को वही बजा सकता है जो परमात्मा से एकाकार है। गुरुजी फिर हमसे शंख लेते हैं, अपने मुँह पर रखते हैं और उससे अद्भुत् ध्वनि प्रकट होती है। इतनी सुंदर गूंज थी कि आँखें खुल गयीं। शंख का महत्त्व तो हमलोग जानते ही हैं। शंख-ध्वनि से भूत-पिशाच भी भागते हैं, कीड़े-मकोड़े और रोगाणु-कीटाणु भी भागते हैं। जिस क्षेत्र में शंख की ध्वनि होती है, वह क्षेत्र शुद्ध और पवित्र माना जाता है, वहाँ पर किसी भी बुराई का प्रवेश नहीं होता।

हमलोग श्री लक्ष्मीनारायण की आराधना में संलग्न रहे हैं, हमलोगों का ध्यान उन्हीं पर केंद्रित रहा है और उन्हीं को अपने समक्ष रखकर सभी ने परिश्रम किया है ताकि यह आराधना, यह यज्ञ उत्तम तरीके से पूर्ण हो। हम सबने स्वयं को इस देवतत्त्व के साथ जोड़े रखा है और गुरुदेव ने स्वयं आकर जीवन की नकारात्मकता तथा दूषित तत्त्वों को दूर करने के लिये सुदर्शन शंख की ध्वनि हमलोगों के लिये की है। अब इससे बढ़िया आशीर्वाद और क्या हो सकता है?

उसके पश्चात् अखाड़ा कर रोज की तरह सहस्रार्चन के आरंभ में पूजा करते हैं, लेकिन आज एक विशेषता दिखलायी दी कि हरेक मूर्ति और विग्रह पर दो-तीन भौंरे बैठे हैं। विग्रह को माला पहनाते और जब टीका लगाने के लिये उंगली उठाते तो वहाँ से भौंरे निकलते थे और उसके बाद हम टीका लगा पाते। सभी मूर्तियों में यह हुआ। कहा जाता है कि देवी का एक स्वरूप भ्रमराम्बिका का होता है, और इस स्वरूप की श्रीशैलम् के मंदिर में आराधना की जाती है। श्रीशैलम् वह स्थान है जहाँ पर शिवपुत्र कार्तिकेय ने भगवान शिव को आमंत्रित करके उन्हें स्थापित किया है, और वहीं पर माता पार्वती भ्रमर रूप में विद्यमान हैं। जब यहाँ पर भ्रमर दिखलायी दिये तो ऐसा प्रतीत हुआ कि देवी माँ भी यहाँ पर विद्यमान हैं और उनका मंगल आशीर्वाद हम सब को, जो इस आराधना में शामिल हुये हैं प्राप्त है, चाहे प्रत्यक्ष रूप से, चाहे अप्रत्यक्ष रूप से।

इन सब संकेतों को देखकर लगता है कि इस आराधना ने अपने उद्देश्य, अपने लक्ष्य को प्राप्त किया है। जब आराधना को निष्काम भाव से किया जाता है, 'सर्वभूतहितेरता:' की भावना से, तो वह व्यक्ति के जीवन को शुभता, मंगलता, सुख, शांति और संतोष से स्पर्श करती है। अभी ऐसा ही प्रतीत हो रहा है, भीतर में शांति और संतोष है, बाहर में शुभता और मंगलता है। यह इस लक्ष्मीनारायण यज्ञ की अनुभूति है हम सबके लिये और यह गुरु एवं ईश्वर का आशीर्वाद है हम सबके लिये। ■

12 September 2022: Poornahuti

The Lakshmi-Narayana Mahayajna is the medium to bring the grace of the Divine and Guru into the lives of everyone in the form of goodness, peace, wellbeing, harmony and upliftment, and with it social and global upliftment as well.

Today we are also celebrating the dedication day, the *samarpan* day, of our Master, Sri Swami Satyanandaji. He has said, "On this day, my Guru had taken me in his fold. I was blessed when he accepted me with all my faults and all my qualities. I have to make the effort to become the medium and instrument to carry the energy and wisdom of my Guru by renouncing the desires and thoughts of what Guru can do for me. I have to think of what I can do for my Guru. How can I transform myself to become better in serving the cause, mission and vision of my Guru?" What a beautiful sentiment!

We all try to make the guru the fulfiller of our wishes and desires. We ask for his blessings so that he can fulfil what we desire and want. There are few who make the effort to do what the guru expects them to do. That is real discipleship. Many people can be initiated and claim to be disciples, yet each one of us still wants to fulfil personal needs and aspirations with the grace and guidance of the guru. We never connect with the *guru tattwa*, the guru element. We are connected to our own element and tattwa. The effort of a disciple is to connect with the guru element and to fulfil the vision and mission of the guru, and that is total surrender.

Today five poornahutis will be offered – the first one on behalf of the entire cosmos, which is the residence of Lord Narayana and the Cosmic Mother Lakshmi. They are the sustainer of the universe and giver of experience. During the program there was a big bang and Lord Narayana came out of his photograph here on the dais to my right. He said, "What

is the use of me being confined to this photograph when I am the indweller of all hearts." So he came out of the photograph and into our hearts. The first ahuti is on behalf of the entire universe where he resides with his Shakti, Mother Lakshmi, so that he always remains the indweller of our hearts.

The second ahuti will be given on behalf of the whole world and the people of different nations, who could not participate physically. They are here with their heart and mind witnessing this auspicious yajna through the medium of live-streaming. The third ahuti will be offered on behalf of the country of India and all its states so that everyone is graced with peace, plenty and prosperity.

The fourth ahuti will be offered on behalf of the Yoga City Munger and Rikhiapeeth as they are the instruments of Sri Swamiji's mission as Yogapeeth, Rikhiapeeth and Sannyasa Peeth, so that they are graced and inspired to continue and live the vision of our Masters. The fifth ahuti will be given from the depth of our heart to Lord Narayana who is present in every life-form, in the waters, the soil, the air, in fire and the sky. We express our respect for Nature and honour Her.

Now the heart is full, the mind empty, and there is nothing more to say only to experience.

Jale Vishnu, thale Vishnu, Vishnu parvata mastake;
Jwala mala kule Vishnu, Vishnu sarvamayam jagat.

The meaning of this Sanskrit sloka is that Vishnu the resider, the indweller of all hearts represents life which exists everywhere

not only in sentient beings but also in insentient forms such as mountains, rivers, oceans, the sun, moon and stars. Everything is nothing but the expression of the Vishnu element. We pay our respects and honour every aspect of creation for it is due to the Vishnu element that we are able to live. If there is no river, no mountain, ocean, sun, moon and stars there won't be any life. Life is an integral part and human beings are an integral part of this cosmic nature. It is expressed in this kirtan:

He Ishwara he Paramatma
Antaryami tujheko pranam.

Dharti ko pranam suraj ko pranam
Chanda ko pranam
Taron ko pranam.

Nadiyon ko pranam sagar ko pranam
Parvaton ko pranam
Har jiva ko pranam.

During this yajna, we have basked in the presence of the Divine, the guru tattwa and the energy of Narayana, Lakshmi and Guru. This is not an intellectual process but an experiential process. Those who have eyes will see, those who have ears will hear and those who have a heart will experience the abounding love and grace that comes down when we connect with the higher element, the Paramtattwa, the Paramatma, the guru element.

We conclude with heartfelt gratitude for being connected with the higher element, the guru element. We can search the whole world and find many good, inspiring people among many crooked, negative and dark people, yet all are people. Real inspiration comes from the guru and higher powers, and we need to hold their hand to go across the ocean of samsara where negativity abounds, limitations exist and restrictions define the human nature. If we hold the hand of Guru and God, we can definitely go across this ocean and be one with these higher elements. ■

12 सितम्बर 2022 – पूर्णाहुति

आज हम अपने गुरुदेव श्री स्वामी सत्यानन्द जी का संन्यास दिवस मना रहे हैं और प्रातःकाल से ही मन में उत्साह और हर्ष है। हमारे गुरुदेव इस दिन के बारे में बतलाते थे, 'जब स्वामी शिवानन्द जी ने मुझे अपने आँचल में लिया और संन्यास की दीक्षा दी, उस समय मेरे जीवन का वह क्षण पूर्ण समर्पण का था। जब मैंने अपने गुरु के चरणों में स्वयं को समर्पित किया, तब उस समय मेरे मन में केवल एक ही विचार था कि मैं किस प्रकार अपने गुरु के अनुकूल बन सकूँ।' शिष्य चाहते हैं कि गुरु उनके अनुकूल बने। चेला चाहता है कि गुरु उनकी कामनाओं को पूरा करे, लेकिन बहुत-ही कम शिष्य और चेले होते हैं जो खुद को गुरु के अनुरूप ढालते हैं। जो ऐसा कर पाते हैं, वे ही गुरु की ऊर्जा और शिक्षा के माध्यम बनते हैं।

आज इस पावन श्रीलक्ष्मीनारायण महायज्ञ का अंतिम दिन भी है और हमलोग इस यज्ञ की पूर्णाहुति करेंगे। यज्ञ की पूर्णाहुति के साथ पूज्य गुरुदेव का स्मरण करते हुये अपने को भी अनुकूल बनाने का प्रयत्न करेंगे। जैसा गुरु और ईश्वर चाहते हैं, वैसा हम जीने का प्रयत्न करेंगे। अगर मन में भाव है कि गुरु हमारे अनुकूल बने तो उस भाव को आज इस अग्नि में समर्पित करना है।

आज हमारे दो प्रयोजन हैं, पहला है लक्ष्मीनारायण महायज्ञ की पूर्णाहुति, जो संसार में शुभता और मंगलता, शांति और सौभाग्य को लाता है और दूसरा प्रयोजन यह कि हम खुद को गुरुमुखी बनाने का प्रयत्न करें और यह आशा, यह कामना छोड़ दें कि गुरु हमारी इच्छाओं को पूरा करने का एक माध्यम है। अगर हम ऐसा प्रयत्न कर सकते हैं तो हमलोगों का जीवन धन्य होगा।

पूर्णाहुति में सबसे पहले समस्त ब्रह्माण्ड की ओर से, जहाँ लक्ष्मी-नारायण का वास है, आहुति प्रदान की जायेगी। उसके पश्चात् पूरे विश्व के भक्तों की ओर से, जो यहाँ पर शारीरिक रूप से उपस्थित नहीं हो पाये हैं, लेकिन मन और हृदय से जुड़े हैं और आँखों से इस अंतरराष्ट्रीय प्रसारण को देख रहे हैं, आहुति प्रदान की जायेगी। उसके बाद भारतवर्ष के सभी राज्यों की ओर से तीसरी आहुति प्रदान की जायेगी ताकि देशवासियों को सुख, शांति और संपदा का आशीर्वाद मिले। चौथी आहुति मुंगेर तथा रिखिया की ओर से प्रदान की जायेगी, और उसके बाद पंचम आहुति, श्रद्धा की आहुति होगी। ■

SRI LAKSHMI-NARAYANA MAHAYAJNA LIVESTREAM

Thousands of devotees in 94+ countries joined the yajna via livestream . . .

India
United States
Bulgaria
United Kingdom
Italy
Spain
Australia
Greece
Ireland
Germany
Uruguay
Switzerland
Canada
Sweden
Colombia
France
Netherlands
New Zealand
Argentina
Serbia
Brazil
Hong Kong
Singapore
Nepal
Hungary
United Arab Emirates
Iran
South Africa
Israel
Indonesia
Lebanon
Austria
Belgium
Romania
Russia
China
Croatia
Denmark
Japan
Norway
Mexico
South Korea
Portugal
Slovenia
Thailand
Turkey
Czechia
Lithuania
Bangladesh
Chile
Mauritius
Qatar
Sri Lanka
Finland
Malaysia
Philippines
Poland
Vietnam
Kazakhstan
Luxembourg
Bahrain
Costa Rica
Dominican Republic
Kenya
Morocco
North Macedonia
Peru
Saudi Arabia
Slovakia
Ukraine
Bermuda
Bosnia & Herzegovina
Cape Verde
Cayman Islands
Cyprus
Ecuador
French Guiana
French Polynesia
Georgia
Guatemala
Jersey
Kosovo
Latvia
Montenegro
Oman
Paraguay
Puerto Rico
Sint Maarten
Taiwan
Tanzania
Uzbekistan
Egypt
Kuwait
Namibia

Sankranti at Sannyasa Peeth

Swami Ratnashakti Saraswati

Daan has two aspects. One is material and one is spiritual. When something is given in daan, the material aspect is the redistribution of material prosperity, and the benefit the recipient will derive through the item given. Whether it is clothing, food or water, the item received is the material benefit. The benefit of daan also refers to the happiness and upliftment that is experienced by the person who receives the gift. This aspect has individual as well as social applications. At the individual level, daan provides the items and resources needed to sustain and develop life. It alleviates suffering and provides sustenance and happiness in the life of the person who receives. At the social level, the benefit of daan ensures the correct and appropriate distribution of resources in society, so that members of society can live in peace and happiness. At the environmental, level the benefit of daan encourages the conservation and sharing of resources.

The spiritual aspect of daan is quite different. The spiritual aspect has two objectives. The first aspect is the process of purification of mind and expansion of awareness that takes place when daan becomes a sadhana and a lifestyle. The sadhana element of daan accesses the spiritual dimension of life through the connection with other people. This is the catalyst for the positive change that is experienced as spiritual merit of daan. From this connection with the positive selfless qualities, the awareness expands and the heart opens. When daan is performed correctly it removes the selfish inclinations of mind. In the *Garuda Purana*, greed and selfishness are likened to the friend who brings constant misery and unhappiness through their friendship, but cannot be warded off. *Lobha*

or greed creates anger, malice and delusion. It gives birth to illusion, rivalry, competitiveness and false prestige. Therefore, the scriptures extol people to perform daan to overcome the self-centred nature and daan is held as the highest virtue which can counter the negative aspects of mind.

Daan is the original dharma of every human being.

– *Swami Niranjanananda Saraswati*

The second aspect is the *punya* or merit of the daan. Merit refers to the subtle, spiritual aspect of daan that is experienced by the person who gives. It is said that everything good in life is secured by daan. Different qualities or manifestations of energy are invoked by the daan of different items. The merit for each daan has been described in the scriptures. For example, the merit may be longevity, meaning that the person who gives the daan will have a long and healthy life. This merit is derived from a particular attribute of prana shakti. The merit may be happiness and freedom from misery. This is an attribute of chitta shakti. If the daan is performed correctly, these qualities are experienced in the life of the person who has given that daan. The merit, the enhancing, and the permanent or imperishable nature of that merit refer to different spiritual elements drawn from the reservoir of cosmic benevolence and grace by the act of daan.

Sinha Sankranti

Sinha Sankranti occurs when the sun transits into the sign of Leo. This is one of the four Sankrantis that are known as Vishnupadi Sankranti. For all the Vishnupadi Sankrantis the correct and most appropriate time for daan is sixteen ghatis before the actual transition.

Daan performed in this muhurta is said to give 100,000 times the ordinary merit. The merit of this daan is called *akshaya* or inexhaustible and eternal. The spiritual merit attained on Sinha Sankranti is not extinguished after death but remains with the donor birth after birth. The scriptures state that the person who gives daan during a Vishnupadi Sankranti does not suffer from cold, if they have given cloth or *vastra daan*. Prosperity does not abandon the person who gives grains, cloth, shelter, a dwelling place or asana. The person who gives red cloth and grains according to their capacity becomes healthy and is prosperous. The merit of this daan is described according to the mental and emotional benefits also. The person who gives on Vishnupadi will attain manahprasad: the mind becomes happy, pleased, and balanced.

At Sannyasa Peeth this year daan was presented to the newspaper hawkers and chai sellers who stand on the roads all day to sell their goods. Items presented included an orange plastic stool for work and home use, vastra daan in the form of saree, kurta, pyjama, dhoti as well as bed linen. Umbrellas to provide protection from the monsoon rains were also given.

Kanya Sankranti

Kanya Sankranti occurs when the sun enters the zodiac sign of Virgo around the 17th of September. This day is also *Vishwakarma Jayanti* or the birthday of Vishwakarma. In the *Rig Veda*, Vishwakarma is the deity of the creative power that holds the universe together, and is considered the *devashilpi* or divine architect of the universe from before the advent of time. According to the instructions given by Brahma, Vishwakarma

constructed and created the whole world. He presides over the sixty-four mechanical arts and is said to have revealed the *vastu shastra* and *sthapatya veda* or science of architecture and sculpture. Vishwakarma is the father-in-law of Surya. It is through Vishwakarma that the cosmic prana was divided and aligned with specific energies and intentions to become the weapons of the devas. The worship of Vishwakarma is a method to access the higher levels of energy and manifest that power as a creative force in daily life.

On Kanya Sankranti daan of clothing and housing or shelter is particularly auspicious and will bring maximum merit. Special attention is given to those who need medical care, and daan of *aushadhi* or medicinal herbs, medical treatment, nutritious food, shelter and care for the ailing and sick are all important forms of daan on Kanya Sankranti. This year the people who work in the *smashana* or cremation ground as well as ferrymen who travel from place to place selling different items were invited to receive daan. The items presented were grih daan in the form of a cotton dari and bed linen for the home, and vastra daan in the form of saree, kurta, pyjama, dhoti. Umbrellas were also given. ■

Open your heart,
"hear"
live there.
Hear Om, the Rolling River of Love

Stay and listen
Om River powers the Heart

From here, travel to see Guru in Sahasrara
The mountain of Light and Love
Your eyes are blessed with His Light

Listen intently
Heart and Heaven are now linked
With the Angels at your side,
Listen to their wings assure you
Witness Guru power-charging the Seven Wonders
By the Glory of River Om's Love and Light

All is His
Heaven and Earth celebrate
This Diamond cannot be stolen,
But you must protect it with your whole heart

Hear that again,
Possessions made of the world are useless

This Diamond holds the Truth:
The Magnificent Light that almost no one sees
The Roaring River that almost no one hears

This Treasure of many lifetimes is to be cultured in Silence
And then given away by Serving with Trust and Love
Sending Happiness out into the world

Om Namah Shivaya

—*Yogsena*

Yoga Publications Trust

Satyam Tales

सत्यम् गाथाएँ

Satyam Tales depict the life and teachings of our beloved guru, Sri Swami Satyananda Saraswati. Through the medium of these simple narratives, we hear the voice of Sri Swamiji inspiring one and all. The stories are a delightful read for children, adults and old alike, conveying an invaluable message for those engaged in the world and for those seeking the spirit. These tales will touch your heart and give you joy, hope, conviction and, above all, faith.

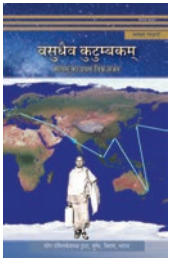

For an order form and comprehensive publications price list, please contact:

Yoga Publications Trust, PO Ganga Darshan, Fort, Munger, Bihar 811 201, India.

Tel: +91-09162 783904, 06344-222430, 06344-228603

A self-addressed, stamped envelope must be sent along with enquiries to ensure a response to your request.

हरि ॐ

सत्य का **आवाहन** एक द्वैभाषिक, द्वैमासिक पत्रिका है जिसका सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जा रहा है। इसमें श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती, श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती, स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती एवं स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती की शिक्षाओं के अतिरिक्त संन्यास पीठ के कार्यक्रमों की जानकारियाँ भी प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती
सह-सम्पादक – स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती

संन्यास पीठ, द्वारा-गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, हरियाणा में मुद्रित।

© Sannyasa Peeth 2022

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं। कृपया आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

संन्यास पीठ
पादुका दर्शन,
पी.ओ. गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201,
बिहार, भारत

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कवर एवं अन्दर के रंगीन फोटो :
श्री लक्ष्मीनारायण महायज्ञ 2022, मुंगेर

• Registered with the Registrar of Newspapers, India
Under No. BIHBIL/2012/44688

Important Notice for all Subscribers

Blessed Self
Jai Ho

We are happy to inform you that since January 2021, the *AVAHAN* magazine is available FREE of COST to all subscribers, supporters, aspirants, devotees and spiritual seekers at –

www.sannyasapeeth.net

Due to the ongoing coronavirus pandemic and uncertainties associated with it, the printed copies of the *AVAHAN* magazine will not be available in 2022 for circulation to subscribers. Therefore, NO new or renewal of previous subscription is being accepted for this magazine for 2022, so please do NOT send any membership for the magazine.

You will be notified from time to time regarding the magazine and any new developments.

In the meantime, continue to imbibe the message of sannyasa and to live the teachings of Sri Swami Sivananda Saraswati and Sri Swami Satyananda Saraswati to improve and better the quality of your life.

With prayers and blessings of Sri Swami Satyananda Saraswati for your health, wellbeing and peace.

Om Tat Sat
The Editor